Chapter-1

अध्याय १

सिद्धान्त पक्ष

हिन्दी और गुजराती साहित्य में ऐतिहासिक उपन्यास का अनुशीलन आरंभ करने से पूर्व यह वांछनीय है कि सर्व प्रथम ऐतिहासिक उपन्यास के सैद्धान्तिक पक्ष पर सम्यक् रूप से विचार कर लिया जाय। " ऐतिहासिक उपन्यास " इतिहास और उपन्यास अर्थात् तथ्य और कल्पना, ऐसे दो परस्पर विरोधी शब्दों के योग से उपलब्ध संज्ञा है। अतः इस अध्याय में हमारा लक्ष्य इतिहास, उपन्यास एवं ऐतिहासिक उपन्यास के सम्बंध में सैद्धान्तिक परिचय प्रस्तुत करना है।

इतिहास :

मानव मन के चिन्तन की विशदता के साथ-साथ " इतिहास " शब्द का अर्थ भी उत्तरोत्तर व्यापकता की ओर अग्रसर होता रहा है। एतद्विषयक विविध विवेचनों पर विचार करने से पूर्व इसके व्युत्पत्तिगत तथा वाच्यगत अर्थ पर विचार कर लेना आवश्यक होगा। व्युत्पत्तिकार की दृष्टि से इतिहास शब्द का अर्थ है - " इति ह एवं आसीत् ", " इति य उच्यते स इतिहासः[1] " - इति (इस प्रकार) ह (ही) (निश्चयात्मकता के अर्थ में) आस[2] (था) ; - (यह) ऐसे ही था अर्थात् यह ऐसे हुआ। " यह ऐसे हुआ " इस वाक्यांश के साथ ही मानव-मन में सहज जिज्ञासा उत्पन्न होती है कि यह क्या, कब, और किसके द्वारा हुआ ? इतिहास इन प्रश्नों का समाधान करता है। वह अपने खुले पृष्ठों पर हमें बताता चलता है कि यह (घटना-प्रसंग) अमुक समय (तिथि या दिनांक को) अमुक व्यक्ति के द्वारा हुआ। इन घटना-प्रसंग, तिथि-दिनांक और पात्र सम्बन्धी तथ्यों की प्रामाणिकता के लिए इतिहास के पास आधार भूत प्रमाण होते हैं, जिनसे वह हमारी शंकाओं का समाधान कर हमें संतुष्ट करता है। इस प्रकार व्युत्पत्ति की

---

१ यास्क के निरुक्त - २।३।१ पर दुर्गाचार्य की वृत्ति

२ पुराण-विमर्श - आचार्य बलदेव उपाध्याय, पृ० ४

दृष्टि से अतीत कालीन निश्चित पात्र, घटना और तिथि आदि तथ्यों से समन्वित यथातथ्य वर्णन को इतिहास कहते हैं ।

वाच्यार्थादि की दृष्टि से विचार करने पर स्थूल रूप से इतिहास के तीन अर्थ दृष्टिगत होते हैं :-

(१) कई बार विशिष्ट व्यक्तियों के महत्त्वपूर्ण क्रिया-कलाप एवं उनकी गति-विधियों को ही इतिहास की संज्ञा दे दी जाती है और ऐसे व्यक्ति " इतिहास-निर्माता " उद्घोषित कर दिये जाते हैं । जैसे अशोक, और महात्मा गांधी अपने अपने समय के इतिहास-निर्माता कहे जाते हैं । यहां इतिहास-निर्माता से हमारा यह तात्पर्य नहीं है कि वे इतिहास लेखक हैं, बल्कि यह कि उन्होंने संसार के घटना-प्रवाह को नया मोड दिया है ।

(२) दूसरा अर्थ सर्वाधिक प्रचलित और बहुत ही उपयुक्त है । इस अर्थ में "इतिहास" शब्द का प्रयोग संसार की घटनाओं या उनके कुछ अंशों के आलेखन के लिये होता है । इसी अर्थ में हम किसी भू-खंड, व्यक्ति, वस्तु, एवं विचार के इतिहास की बात कहते हैं, जो कालक्रम से विकसित होते हुए अपने पीछे विकास के चिह्न छोड गये हों ।

(३) इतिहास का जो तीसरा अर्थ उसकी व्युत्पत्ति से ध्वनित है, वह है "गवेषणा " या गवेषणा की किसी प्रक्रिया से उपलब्ध ज्ञान । इसका अंतर्निहित भाव है सत्य का अन्वेषण, अनुसंधान, एवं उसका अनवरत अनुसरण । आचार्य नलिनी विलोचन शर्मा के शब्दों में इस अर्थ में इतिहास विज्ञान के अतिरिक्त कुछ नहीं । [१]

ऐतिहासिक विधावन या धारणाएं :

ऐतिहासिक तथ्यों का अध्ययन करने वाले विद्वज्जगत में ऐतिहासिक

---

१ साहित्येतिहास दर्शन, आचार्य न० वि० शर्मा, पृ० ~~[illegible]~~ ६ । ~~[illegible]~~

विभावन या धारणा को लेकर आठ विभिन्न मत है और इनमें से प्रत्येक ने हमारे ऐतिहासिक विकास के ज्ञान में एक महत्त्वपूर्ण योग दिया है। ये मत एकान्ततः अपने आप में सीमित नहीं हैं, किंतु कुछ अंशों में एक दूसरे के पूरक भी हैं। इनके नाम इस प्रकार हैं :-

१ महान पुरुषों की जीवनीमूलक धारणा,
२ सार्वभौम धारणा,
३ समाजशास्त्रीय धारणा,
४ आर्थिक या भौतिकवादी धारणा,
५ आध्यात्मिक या धार्मिक धारणा,
६ वैज्ञानिक धारणा,
७ नृतत्व सम्बन्धी या सांस्कृतिक धारणा,
८ सामुदायिक मनोवैज्ञानिक धारणा।

१ महान पुरुषों की जीवनी मूलक धारणा :

विक्टोरियन युग के महान विचारक कार्लाइल ने इस मत का प्रतिपादन किया है। उसका मंतव्य है कि महान पुरुषों का जीवन-चरित्र ही इतिहास की विषय-वस्तु है। ये इतिहास के विकास में मुख्य प्रेरक निमित्त होते हैं। अपने युग पर तो इनका पूरा प्रभाव होता ही है, साथ ही अपने प्रभाव से ये भविष्य के इतिहास का बीजारोपण भी कर जाते हैं। फ्रौड भी इस मत का समर्थक है। एमिल फेगेट और विलियम आर येयर इस मत के पोषक हैं।

समीक्षा :

सूक्ष्म दृष्टि से देखने पर इस मत में इतिहास का आंशिक सत्य

१ Encyclopedia America Vol.7, p. 240-242. परवर्ती ऐतिहासिक धारणा सम्बन्धी विवेचन इसी के आधार पर है।

ही व्यक्त हुआ है, सम्पूर्ण सत्य नहीं। महान पुरुषों के जीवन में जो कुछ घटित होता है, वह उनके युग का इतिहास नहीं हो सकता। क्योंकि वे ही उसके एक मात्र निमित्त नहीं होते। वस्तुतः उन घटनाओं के प्रकाश में आने के कारण पूर्व काल से ही चले आते हैं और उन महापुरुषों के समय में उनका उस घटना के रूप में प्रस्फोट होता है। अतः उन महापुरुषों को उस घटना परंपरा का निमित्त मान लेना एक भारी भूल होगी तथा उनके जीवन में घटित घटना-शृंखला मात्र को इतिहास कहना भी समीचीन न होगा। अतः ऐतिहासिक अवधारणा की दृष्टि से अधिक से अधिक इसे आंशिक सत्य के रूप में स्वीकार किया जा सकता है।

२ सार्वभौम धारणा :

१९ वीं शती के उत्तरार्द्ध में प्रसिद्ध इतिहास-चिंतक बकल ने इस मत का प्रतिपादन किया था। उसका यह कथन है कि भौगोलिक परिस्थिति और पार्श्ववर्ती प्रकृति ही मानव के इतिहास सर्जन में विशेष कार्य करती है। उसने विविध उदाहरणों द्वारा यह सिद्ध किया है कि भूमि-रचना एवं जलवायु के अनुसार ही भूमि पर रहनेवाले प्रजा जनों के गुण विकसित होते हैं। इतना ही नहीं अपितु इसीके द्वारा उनके धार्मिक विचार, उनकी साहित्यिक कल्पनाएं, उनकी राजकीय संस्थाएं एवं उनके सांसारिक रीति-रिवाज बनते हैं। आगे चल कर कार्ल राइटर, फ्रेडरिक, रेक्लस, सेम्पल आदि विद्वानों के द्वारा यह धारणा पुनरुज्जीवित की गयी।

समीक्षा :

किसी विशिष्ट भू-प्रदेश में रहने वाले प्रजाजन निरपवाद रूप से एक विशिष्ट गुण-राशि से ही सम्पन्न होते हैं, यह भी सर्वकालीन एवं सम्पूर्ण सत्य

नहीं है । अतः ऐतिहासिक चिंतन में यह धारणा भी आंशिक रूप से ही सहायभूत ठहरती है ।

३ समाज शास्त्रीय धारणा :

इस धारणा के समर्थक हैं, विकोटगर्ट, फरगूसन, सीली, और लार्ड एक्टन । इनकी मान्यता है कि मानव का इतिहास उसकी राजकीय एवं सामाजिक संस्थाओं के द्वारा ही निर्मित होता है । इनके सुधार और ह्रास से ही मनुष्य के जीवन में उत्थान और पतन आते हैं और उसके इतिहास की दिशाएं बदलती रहती हैं । एफ० एच० गिडिंगस्, मेक्स वेबर, पी० टी० सोरोकिन, आदि इसके कुशलतम प्रतिनिधि रहे हैं ।

समीक्षा :

यहां ध्यान देने योग्य बात यह है कि इन राजकीय एवं सामाजिक संस्थाओं का निर्माता स्वयं मनुष्य है । यहां मुख्य कारण की उपेक्षा करके एक अन्य उपकारण को मूल निमित्त माना गया है । यह एक विचारणीय विषय है । सत्य तो यही प्रतीत होता है कि ये संस्थाएं अंशतः एवं परोक्ष रूप से ही ऐतिहासिक विकास में सहायभूत होती है ।

४ आर्थिक या भौतिक वादी धारणा :

एल० ए० फरबेक एवं कार्ल मार्क्स ने इस का प्रवर्तन किया है । इनके अनंतर समर, स्मालर, ऐवेसर, लोरिया, बर्ड बेगार्ट, और सिलोविच आदि विद्वानों ने इसका बड़े जोरों से समर्थन किया है । सर्व सम्मत रूप से इस धारणा के अन्तर्गत यह प्रतिपादित किया गया है कि समाज में प्रचलित आर्थिक व्यवस्था का स्वरूप और उसकी स्थिति ही समाज के विकास का इतिहास निर्मित करती है ।

समीक्षा :

यह धारणा अपनी कुछ एक अतिशयोक्तियों के उपरांत भी अधिक लोक प्रिय और प्रगतिशील होती दिखाई दे रही है ।

५ आध्यात्मिक या धार्मिक अवधारणा :

यह ऐतिहासिक धारणा कांत और फिश्ते के आदर्शवाद से उद्भूत है । रडोल्फ, एकन, और शेलर मैथ्यू इसके प्रवर्तकों में से हैं । मैथ्यू के शब्दों में आध्यात्मिक ऐतिहासिक धारणा वैयक्तिक अवस्थाओं के प्रति भौगोलिक एवं आर्थिक शक्तियों के साथ आध्यात्मिक शक्तियों के आविष्कार में अन्तर्निहित है । ये वैयक्तिक अवस्थाएं आध्यात्मिक सत्ताओं से सम्बद्ध सामान्य रूप में प्राप्त नहीं होंगी, किन्तु उन योग्य व्यक्तियों की गतिविधियों में प्राप्त होंगी, जो मानव कल्याण के लिए शारीरिक प्रकृति को पूर्णतः प्रयुक्त कर सामाजिक सम्बन्धों में अपनी आत्माभिव्यक्ति प्राप्त करते हैं ।

समीक्षा :

इस ऐतिहासिक धारणा में कथित योग्य व्यक्तियों की आध्यात्मिक सत्ताएं परोक्ष रूप से मानव की गति विधियों को प्रभावित करती हैं । साथ ही सर्वदा और सर्वत्र ऐसी आध्यात्मिक सत्ताओं का मानव की गति विधियों से सम्बद्ध होना भी सहज सम्भव नहीं होता । अतः यह धारणा अंशतः एवं परोक्ष रूप से ही ऐतिहासिक विकास में सहायक होती है ।

६ वैज्ञानिक धारणा :

प्राकृतिक विज्ञान को इतिहास के क्षेत्र में बहुत ही महत्त्वपूर्ण प्रेरक निमित्त मानने की प्रवृत्ति मार्क्विस डे कोन्डोर्सेट के लेखन में विशेष रूप से व्यक्त

हुई और आगे चलकर आगस्ट काम्प्टे, जे डब्ल्यू ड्रेपर, एस० टी० बकल और एन्ड्रू डी० व्हाइट के ग्रंथों में विकसित हुई ॥ प्राकृतिक विज्ञान प्रयोगशील विज्ञान का अनिवार्य रूप से अग्रगामी स्वरूप है । इसीलिए इतिहासकारों ने प्रोद्योगिकी को बहुत मान्यता दी और समाज के वैज्ञानिकों को मानव संस्कृति के विकास के में निर्णायक प्रभाव के रूप में माना । जो इतिहास की प्रोद्योगिक धारणा में आस्था रखते हैं, उनका मानना है कि यह धारणा आर्थिक धारणा की अपेक्षा बहुत मौलिक है । इसके अनुसार प्रचलित वैज्ञानिक और प्रोद्योगिक ज्ञान ही हमारे आर्थिक जीवन के स्वरूप और मूल्यों को निर्धारित करता है । सेनफ्रेड गिडियन ने " मैकेनाइजेशन टेक्स् कमांड " में तथा लूइस मर्म फोर्ड ने " मैन एन्ड टेक्नीक्स " में इसे सुस्पष्ट किया है ।

समीक्षा :

यह धारणा काफी अंशों में मानव के ऐतिहासिक विकास में सहायभूत होने के कारण लोकप्रिय है । किंतु समग्र रूप से यही इतिहास विधायिका है, यह मान लेना भी उपयुक्त नहीं होगा ।

७ नृतत्व सम्बन्धी धारणा :

मानव के इतिहास में इस धारणा का योगदान बहुत ही महत्त्वपूर्ण है । इसने इतिहास को समस्त संसार की मानव-संस्कृति को लक्ष्य में लेकर देखा है और मानव में परस्पर सहिष्णुता तथा एक दूसरे के विचारों को समझने की भावना फैलाकर प्रांतीयता और राष्ट्रीयता के कारण उत्पन्न होनेवाली पूर्वाग्रह की धारणाओं और संकुचितताओं को काफी अंशों में दबा दिया है । यह इसी धारणा का महत्त्वपूर्ण योगदान है कि इस दृष्टिकोण से इतिहासकार राजनीति

की अपेक्षा संस्कृति पर जोर देने लगे। इसके प्रवर्तकों में ई० बी० टिलर, ज्युलियस लिपर्ट, और एल० एच० मार्गन हैं। इसे सुसंस्कृत एवं वैज्ञानिक आधार देनेवालों में हैं आक्रेट वेर कांत, आर० आर० मैरेट, और फ्रेंज बोस। यही विभावन धारणा अपने एवं विकसित स्वरूप में सांस्कृतिक विज्ञान के स्वरूप में हमारे समक्ष आता है जिसे लेसी० ए० व्हाइट आदि ने परिपुष्ट किया है।

समीक्षा :

इस ऐतिहासिक अवधारणा ने मानव समुदाय के उस उपेक्षित सांस्कृतिक पक्ष को हमारे सम्मुख प्रस्तुत किया है, जो उसके राजनीतिक और आर्थिक पक्षों की अपेक्षा उसे उदात्तता की ओर अग्रसर कर जीवन के सम्यक् विकास की अनुभूति प्रदान करता है। अतः मानव के ऐतिहासिक विकास को आंशिक रूप में यह धारणा अवश्य प्रभावित करती है।

सामुदायिक मनोवैज्ञानिक धारणा :

सब से महत्त्वपूर्ण और नवीनतम ऐतिहासिक धारणा, जो आज के नये इतिहास का प्रतिनिधित्व करती है, वह है बौद्धिक अथवा सामुदायिक मनोवैज्ञानिक धारणा। इसके अनुसार कारण परंपरा की कोई भी कोटि ऐतिहासिक विकास के समय और स्वरूप को समझाने के लिए पर्याप्त नहीं है। किसी भी निश्चित युग के ऐतिहासिक विकास का विवरण प्रस्तुत करने के लिए उस युग के सामुदायिक मनोविज्ञान के अतिरिक्त कुछ भी पर्याप्त नहीं समझा जा सकता। यह इतिहासकार का कार्य है कि वह ऐसे मुख्य कारणों की शोध करे उनका मूल्यांकन करे और उन्हें प्रस्तुत करें, जो (कारण) जीवन के सामुदायिक विचार को उत्पन्न करते हैं, उसे एक निश्चित स्वरूप देते हैं, और जो जीवन के अस्तित्व और प्रगति के लिए सामूहिक संघर्ष की प्रकृति का निश्चय करते हैं। इस धारणा के प्रवर्तकों में से हैं, सर्व श्री कार्ल लैम्प्रेट, ल्यूसीएन लेवी, ब्रुहल, एमिल डर खेम, और एच० ई०

बारवेस। श्री एच० ई० बारवेस ने इस धारणा का व्यापक सर्वेक्षण प्रस्तुत किया है।

समीक्षा :

यह ऐतिहासिक धारणा मानव के ऐतिहासिक विकास के मूल में निहित मनोवैज्ञानिक तथ्यों का उद्घाटन कर इतिहास की गतिविधियों को समझने की एक नई दृष्टि प्रदान करती है। इसका योगदान महत्त्वपूर्ण होते हुए भी, इतिहास के विकास को यह एकान्ततः और समग्र रूप से प्रभावित नहीं करती। संक्षेप में यह धारणा भी इतिहास के सत्य की आंशिक अभिव्यक्ति ही करती है।

निष्कर्ष :

विविध विद्वानों द्वारा प्रस्तुत उपर्युक्त ऐतिहासिक धारणाओं का समग्रतया अध्ययन करने पर यह प्रतीत होता है कि इनमें से कोई भी ऐतिहासिक अवधारणा अपने आप में पूर्ण नहीं है। अतः इतिहास के सम्पूर्ण सत्य को समझने के लिए हमें सर्वपक्षीय दृष्टिकोणों का सम्यक् रूप से उपयोग करना होगा। तभी हम इसकी व्यापकता हृदयंगम कर इसके प्रति सम्यक् न्याय कर सकेंगे।

इतिहास सम्बन्धी भारतीय दृष्टिकोण :

१९ वीं शती के प्राच्य विद्या-विशारद पाश्चात्य विद्वानों की सदैव यह धारणा रही है कि प्राचीन भारतीयों में इतिहास-विवेक का अभाव रहा है। भारतीय दृष्टिकोण के समर्थकों की मान्यता है कि आज उपर्युक्त इतिहास-विषयक चिंतन की जिस सीमा तक आकर वे इसकी व्यापकता अभिव्यक्त करते हैं, उसे प्राचीन भारतीयों ने बहुत पूर्व ही प्राप्त कर लिया था। विष्णु पुराण की टीका

में श्रीधर स्वामी ने इतिहास के विषय वस्तु को लेकर एक प्राचीन वचन उद्धृत कर व्यक्त किया है,

आर्यादि बहु व्याख्यानं देवर्षि चरिताश्रयम् ।
इतिहासमिति प्रोक्तं भविष्याद्भुत धर्मयुक् ।। [1]

अर्थात् ऋषियों के व्याख्यान, देवर्षि चरित, तथा अद्भुत धर्म-कथादि जिसमें हो, वह इतिहास है । यहां आर्यादि व्याख्यान में धर्म शास्त्रीय अर्थात् राजनीतिक सामाजिक एवं सांस्कृतिक आदि विषयों से सम्बंधित ऐतिहासिक ज्ञान एवं देवर्षि चरित और धर्मकथादि में पूर्ववर्ती पृष्ठों में निर्दिष्ट महापुरुषों की जीवनीमूलक धारणा एवं धार्मिक ऐतिहासिक धारणाओं की भावना अन्तर्निहित है ।

इतिहास के आदर्शों की ओर भी प्राचीन भारतीय चिन्तकों का दृष्टिकोण किसी प्रकार कम व्यापक नहीं रहा है । इस विषय में महाभारतकार कृष्ण द्वैपायन का यह कथन दृष्टव्य है -

धर्मार्थ काम मोक्षाणामुपदेश समन्वितम् ।
पूर्ववृत्त कथायुक्त मितिहासं प्रचक्षते ।।

अर्थात् जिसमें धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष का उपदेश एवं पुरावृत्त कथा हो वह इतिहास है । यह स्वतः स्पष्ट है कि धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष इस पुरुषार्थ चतुष्टय में मानव-सभ्यता का प्रत्येक क्षेत्र अंतर्भुक्त हो जाता है ।

इतिहास का नया दृष्टिकोण :

पाश्चात्य विद्वानों द्वारा इतिहास का जो स्वरूप हमारे

---

१ साहित्येतिहास दर्शन, श्री न० वि० शर्मा, पृ० २

सम्मुख प्रस्तुत किया गया है, वह आज अपनी प्राचीन दीवारों में आबद्धता की स्थिति से स्वतंत्र हो नित्य नये आयाम और दृष्टिकोणों को अपना कर अग्रसर होता जा रहा है। परिणामतः विविध विद्वानों द्वारा विभिन्न विद्या-शाखाओं के क्षेत्रों में की गई गवेषणाओं से मानव के ऐतिहासिक विकास सम्बन्धी विचारों में न केवल काफी परिवर्तन अपितु एक क्रांति सी आ उपस्थित हुई है। इतिहास के नवोदित स्वरूप के विषय में श्री जेम्स हार्वे रोबिन्सन के विचार द्रष्टव्य हैं -

> " नव्य इतिहास अतीत के अध्ययन पर लादी हुई प्राचीन सीमाओं से निकल रहा है। भविष्य में यह मानव जाति के विषय में नृतत्वज्ञों, अर्थशास्त्रियों, मानस शास्त्रियों एवं समाज शास्त्रियों द्वारा की हुई शोधों से भी लाभ उठाएगा ; वे शोध जिन्होंने पिछली अर्द्ध शताब्दी में मानव जाति के मूल स्रोत उसकी प्रगति एवं उसके भविष्य सम्बन्धी विचारों में एक क्रांति, एक महान परिवर्तन ला उपस्थित किया है। " [1]

आज वास्तव में इतिहास श्री रोबिन्सन की अपेक्षाओं के अनुसार विकास-पथ पर गतिशील है।

इतिहास की सीमा-रेखा :

अपने व्यापक अर्थ में इतिहास वर्तमान अवधि से पूर्व घटित समस्त पदार्थों, विषयों एवं व्यक्तियों से सम्बन्धित विवरणों को अपनी परिधि में ले लेता है। किंतु हमारा अभीष्ट यहाँ केवल मानव-जीवन के सर्वांगीण इतिहास से ही है। इस दृष्टि से कुछ-एक प्रश्न हमारे सम्मुख आते हैं, जिनका

[1] Encyclopedia Americana, Vol. 7, p. 248.

स्पष्टीकरण हमारे अभीष्ट विषय के लिए अत्यावश्यक है। इतिहास के मूल व्यापक अर्थ को दृष्टि में रखने पर सर्व प्रथम तो यह प्रश्न उठता है कि मानव के वर्तमान जीवन में जो घटनाएं घटित होती हैं, क्या उन्हें भी इतिहास की परिधि में गिना जाय ? यदि नहीं, तो इस अवस्था में इतिहास की सीमा-रेखा क्या होनी चाहिए ?

यह उल्लेखनीय है कि मानव के वर्तमान जीवन में घटित प्रत्येक घटना की पृष्ठभूमि में एक कार्य-कारण परंपरा विद्यमान रहती है, कितने ही घात-प्रतिघातों के मध्य से वह पारित होती है, उसका अपना एक काल होता है, जिसके अनंतर ही वह अस्तित्व में आती है। ऐसी जिन घटनाओं और उनकी कार्य-कारण परंपरा को मानव अपने वर्तमान जीवन में घटित होते देखता है, वे उसके जीवन में सजीव स्मृति के रूप में विद्यमान रहती हैं। इन्हें इतिहास की मान्यता देना किसी भी प्रकार काल संगत नहीं है। अतः सुधी विद्वानों की यह मान्यता है कि वर्तमान पीढी के निजी संस्मरणों की अवधि से परे की घटनाओं को ही इतिहास की कोटि में ग्रहण किया जाय। इस दृष्टि से यदि वर्तमान भारतीय पीढी की वय लगभग पचास वर्ष मानी जाय, तो वर्तमान से ५० वर्ष पूर्व घटित घटना-व्यापार ही इतिहास की परिधि में ग्राह्य होगा।

दूसरा प्रश्न इतिहास के क्षेत्र से सम्बन्धित है। सामान्यतः राजनीतिक क्षेत्र में किसी विशेष समय विशिष्ट व्यक्ति द्वारा हुई महत्त्वपूर्ण घटनाओं के तथ्यात्मक लिपिबद्ध स्वरूप को ही इतिहास मान लिया जाता है। यह सत्य है कि ऐसे इतिहास पात्र, घटना और तिथि सम्बन्धी ठोस सत्यों से युक्त होते हैं। किंतु इनका सम्बन्ध मानव के एक पक्ष से ही है, उसके सर्वांग से नहीं। अतः ये मानव-जीवन की सम्पूर्ण ऐतिहासिकता के परिचायक नहीं। डा० जगदीशचंद्र जोशी का कथन यहां द्रष्टव्य है, " आधुनिक इतिहासकार के लिए

इतिहास का सम्बन्ध केवल व्यक्तियों से नहीं है। नये इतिहास का भी एक दर्शन है, जो एक ओर तो विश्लेषणात्मक एवं तर्कपूर्ण विवेचना के छोरों को स्पर्श करता है और दूसरी ओर संश्लिष्ट प्रभाव की व्यंजना को। मानव-समाज के असंख्य घात-प्रतिघात में आधुनिक इतिहासकार ऐसे चिरन्तन नियमों का अन्वेषण करता है, जिनका सम्बन्ध व्यक्ति-विशेष और काल-विशेष से न होकर सभ्यता के चिरंतन एवं शाश्वत सत्यों से है।"[1]

तात्पर्य यह है कि मानव केवल राजनीतिक क्षेत्र का अंग नहीं है। समाज के साथ विभिन्न स्वरूपों में उसका सम्बन्ध उतना ही स्वाभाविक है, जितना कि उसके एक राज्य का नागरिक होना। मानव-समाज की सम्पन्नता - विपन्नता भी उसकी समसामयिक आर्थिक-व्यवस्था पर निर्भर रहती है। इसीके अनुसार सामाजिकों की राजनीतिक, सामाजिक, एवं सांस्कृतिक क्षेत्र की ओर अभिरुचि जागृत होती है और उन्हीं अभीष्ट दिशाओं में उनकी गतिविधियों का विकास होता है। अतः अपने क्षेत्र की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण होते हुए भी केवल राजनीतिक क्षेत्र के इतिवृत्त समय और व्यक्ति-विशेष की पूर्णता नहीं प्राप्त कर सकते।

दूसरे, किसी युग में कोई महत्त्वपूर्ण घटना या परिवर्तन अथवा क्रांतियां एकाएक नहीं हो जातीं, वरन् इनके मूलकारण इनसे पूर्व के युगों में निहित और क्रियात्मक रूप में परिवर्द्धित होते चले आते हैं। इन घटनाओं के तात्कालिक कारणभूत विशिष्ट-व्यक्ति भी उसी विशिष्ट काल में अनायास ही नहीं अवतरित होते, अपितु वे युगों के अजस्र-प्रवाह की एक लहर की तरह होते हैं, जो काल की अखंड धारा में एक बार उठकर पुनः विलीन हो जाते हैं।[2] अतः राजनीतिक

---

१ प्रसाद के ऐतिहासिक नाटक, डा० जगदीशचंद्र जोशी, पृष्ठ १-२ ।

२ वही पृष्ठ- २ ।

क्षेत्र में किसी विशेष समय विशिष्ट व्यक्तियों द्वारा किये गये महत्त्वपूर्ण क्रिया-कलाप ही उस समय और व्यक्ति विशेष के सम्पूर्ण इतिहास का निर्माण नहीं करते, वरन् तत्कालीन सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक गतिविधियां भी उस काल के इतिहास की सम्पूर्णता में योग-विधायिका होती हैं।

इस प्रकार इतिहास प्रकृति के प्रांगण में व्यक्ति, समाज, राष्ट्र और राज्यों के पारस्परिक तथा उत्तरोत्तर अतीतकालीन संघर्षों का, उनकी जय-पराजय का एवं तज्जन्य उनके राजनीतिक आर्थिक और सामाजिक तथा सांस्कृतिक उत्थान-पतन का सतथ्य वर्णन है।

इतिहासकार अपने इतिहास के लिए दो प्रकार की सामग्रियों का उपयोग करता है, जिन्हें उनके स्वरूप की दृष्टि से " ध्रुव " और " चल " दो भेदों में विभक्त किया जा सकता है। " ध्रुव " सामग्री में ताम्रपत्र, शिलालेख, अभिलेख, मुद्राएं, मूर्तियां, स्तम्भ एवं समसामयिक इतिहासकारों के ग्रंथ आदि का समावेश होता है। युग युगान्तर में इनसे प्राप्य तथ्यों में कोई अंतर नहीं आता, अतः इन्हें ध्रुव कहा गया है। इतिहास रचना के लिए ये बहुत ही प्रामाणिक साधन हैं। किन्तु इतिहास के यथातथ्य वर्णन के लिए इनसे प्राप्य प्रमाण पूर्णतया पर्याप्त नहीं होते, अपितु इनसे तो इतिहास की सम्यक् रूपरेखा भी नहीं बन पाती। अतः इतिहासकार को अन्य सामग्री का भी उपयोग करना पड़ता है, यह है " चल " सामग्री। प्राचीन साहित्य ग्रंथ, धार्मिक, दार्शनिक, एवं वैज्ञानिक ग्रंथ, पौराणिक कथाएं और जन-श्रुतियां तथा लोक-विश्वास एवं रीति-रिवाज " चल " सामग्री के अन्तर्गत आते हैं। इनसे प्राप्त विवरण यद्यपि ध्रुव सामग्री के तथ्यों की भांति सर्वथा प्रामाणिक नहीं होते, तथापि इनमें इतिहास की पर्याप्त संभावनाएं विद्यमान होती हैं। अतः समाजशास्त्रीय और ऐतिहासिक अनुसंधान के आधार पर इनसे प्राप्त तथ्यों को इतिहास के समकक्ष मान लिया जाता है।

इतिहास सम्बन्धी विचार कर लेने के पश्चात् अब उपन्यास एवं

ऐतिहासिक उपन्यास का तात्विक विवेचन वांछनीय होगा ।

उपन्यास :

साहित्य की विभिन्न-विधाओं में उपन्यास का विशेष महत्वपूर्ण स्थान है । साहित्य के स्वरूप के विषय में भले ही मतभेद हो, किंतु यह बात सर्व सम्मत है कि उसके प्रमुख प्रतिपाद्य जीवन और जगत हैं - अर्थात् साहित्य जीवन और जगत की जितनी सुंदर और सर्वांगीण अभिव्यक्ति उपन्यास में दिखाई पड़ती है, उतनी अन्य किसी साहित्यिक विधा में नहीं मिलती । इसी कारण उपन्यास आज सर्वाधिक लोकप्रिय साहित्यांग है । आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने उपन्यास की रोचकता को उसकी लोक-प्रियता का हेतु बता वस्तुःस्थिति का सम्यक् विश्लेषण करते हुए यह स्पष्ट किया है कि अन्य साहित्यिक विधाओं की तुलना में यह सर्वाधिक लोकप्रिय साहित्यांग बन चुका है ।[१] डा० गोविंद त्रिगुणायत के शब्दों में साहित्यिक दृष्टि से ही नहीं, सांस्कृतिक और मनोवैज्ञानिक दृष्टि से भी इसकी गणना प्रथम कोटि की विधाओं में होने लगी है ।[२]

उपन्यास : शब्दार्थ : परिभाषा :

उपन्यास शब्द " उप " तथा " नि " उपसर्ग पूर्वक " अस् " धातु में अच् प्रत्यय लगने से बना है, जिसका शाब्दिक अर्थ है " पास रखना " - अर्थात् किसी बात या विचार को किसी के सन्निकट या सम्मुख प्रस्तुत करने का व्यापार । अंग्रेजी में उपन्यास शब्द के लिए Novel शब्द का प्रयोग किया गया है, जिसका अर्थ है, " नवीन " । गुजराती में अंग्रेजी शब्द के आधार पर ही " नवल कथा " शब्द

१ साहित्य का साथी, डा० हजारी प्रसाद द्विवेदी, पृ० ७०-७१

२ शास्त्रीय समीक्षा के सिद्धांत, डा० गोविंद त्रिगुणायत, पृ० १०९

अपना लिया गया है। किंतु उपन्यास शब्द की अपनी एक अनूठी विशेषता है। डा॰ हजारी प्रसाद द्विवेदी ने इस साहित्य विधा की नवीनता के विषय में विशेष रूप से बल दिया है। आपका कथन है कि, " उपन्यास वस्तुतः ही " नवल " अर्थात् नया और ताजा साहित्यांग है, परंतु फिर भी जिस मेधावी ने कथा आख्यायिका आदि शब्दों को छोडकर अंग्रेजी Novel का प्रतिशब्द उपन्यास माना था उसकी सूझ की प्रशंसा किये बिना नहीं रहा जाता। जहां उसने इस नये शब्द के प्रयोग से यह सूचित किया कि इस विशेष साहित्यांश के द्वारा ग्रंथकार पाठक के निकट अपने मन की कोई विशेष बात, कोई अभिनव मत रखना चाहता है। "[१]

उपन्यास की व्युत्पत्ति और उसके शब्दार्थ पर विचार करने के पश्चात् उसकी परिभाषा एवं उसके तत्त्वों का विवेचन वांछनीय है। वास्तव में जो वस्तु जितनी सरल होती है, उसकी परिभाषा उतनी ही जटिल होती है। कविता की परिभाषा की भांति उपन्यास की भी विभिन्न विद्वानों ने जो परिभाषाएं प्रस्तुत की हैं, उनमें से प्रमुख परिभाषाओं को यहां संक्षेप में उद्धृत किया जा रहा है।

१ श्री राल्फ फाक्स : (Rolf Fox)

" उपन्यास केवल कथात्मक गद्य नहीं है, यह मानव-जीवन का गद्य है, यही पहली कला है, जिसने सम्पूर्ण मानव को अंगीकार किया और उसे अभिव्यक्त करने की चेष्टा की है। [२]

१ साहित्य का साथी, डा॰ हजारी प्रसाद द्विवेदी, पृ॰ ७१

२ 'The Novel is not merely fictional prose, it is the prose of man's life; the first to take the whole man and given him expression'.
The Novel and the Peopl: Rolf Fox., p. 28.

यहाँ श्री राल्फ फाक्स ने उपन्यास के कथातत्त्व एवं उसके द्वारा सम्पूर्ण मानव-जीवन की अभिव्यक्ति, इन दो तथ्यों को अपनी परिभाषा में स्थान दिया है।

२ श्री क्रास :

श्री क्रास (Cross) की दृष्टि से उपन्यास वह गद्य आख्यान कहा जाता है, जो यथार्थ जीवन का यथार्थवादी दृष्टि से अध्ययन करे। "[1]

श्री क्रास ने अपनी परिभाषा में आख्यान तत्त्व और यथार्थ जीवन को तो ग्रहण किया ही है किंतु उसके (जीवन के) निरूपण की विशेष पद्धति (यथार्थवादी) की ओर भी अंगुलि-निर्देश किया है।

श्री क्रास ने भी अपनी परिभाषा में राल्फ की भाँति आख्यान तत्त्व और यथार्थ जीवन को तो ग्रहण किया ही है। किंतु साथ ही उसके (जीवन के) निरूपण की विशेष पद्धति (यथार्थवादी) ~~की ओर~~ भी ~~अंगुलिनिर्देश~~ इशारा किया है।

३ क्लारा रीव :

श्री क्लारा रीव उपन्यास को उसके रचना-काल के यथार्थ जीवन, सभ्यता, और समय का चित्र मानता है। उसका कथन है कि उपन्यास अपनी बातों को एक ऐसे परिचित सम्बन्ध में प्रस्तुत करता है, जैसे वे प्रतिदिन हमारी आँखों के सामने से गुजरती हैं ; वे बातें जो हमारे और हमारे मित्रों के साथ घटित हो सकती हैं ; और इसकी पूर्णता इसी में है कि यह प्रत्येक दृश्य को ऐसे सहज या प्राकृतिक स्वरूप में प्रस्तुत करता है और उन्हें इतना संभाव्य बना देता है कि हमें इन सब के यथार्थ

1. Cross, The Development of English Novel, Introduction, page-XV
" That prose-fiction which deals realistically with actual life is called... the novel."

होने का आभास होने लगता है और कम से कम पढते समय तो हम कथा के पात्रों के साथ उसी प्रकार हर्ष और दुःख का अनुभव करते हैं, जैसे मानो वे अपने हों ।[1]

श्री रीव ने उपन्यास की अपनी परिभाषा में मानव-जीवन एवं उसके समय और सभ्यता के अंकन अर्थात् कथावस्तु और वातावरण के यथार्थ निरूपण की ओर इंगित किया है । कथावस्तु के निरूपण में उसका विशेष आग्रह कल्पना तत्त्व की सहज संभाव्यता पर है, जो पाठक की आत्मीयता को उद्वेलित करती है ।

१ लार्ड डेविड सेसिल :

लार्ड डेविड सेसिल के अनुसार "उपन्यास एक ऐसी कलाकृति है जो हमारा जीवंत जगत से परिचय कराती है, यह जगत कुछ बातों में हमारे अपने संसार से मिलता जुलता है, किन्तु उसकी अपनी वैयक्तिकता होती है ।"[2]

लार्ड डेविड सेसिल उपन्यास का प्रतिपाद्य तो मानव जगत ही मानते हैं किंतु इन्होंने उसकी वैयक्तिक विविधता का भी स्वीकार किया है ।

१ राबर्ट लिडेल :

आपके लिए " उपन्यास एक साहित्यांग के नाते अभी तक नवीनता की सौरभ लिए हुए है । "[3]

1. The novel is a picture of real life and manner and of times in which it is written. The novel gives a familiar relation of such things as pass every day before our eyes, such as may happen to our friends or to ourselves and the perfection of it is to present every scene in so easy and natural manner and to make them appear so probable as to deceive us into persuation (at least, which we are reading) that all is real until we are affected by joy or distress of persons in the story as if they were our onw. - The Progress of Romance - Clara Reave, produced in Cross's Development of the English Novel, page - XIV - XV.
2. 'A novel is work of art, in so far as it introduces us into a living world, in some respects resembling the world, we live in, but with an individuality of its own.'
   Lord Devid Cecil - Hardy, the Novelist.
3. 'The novel as a literary form has still a flavour of newness'.
   Robert Liddell : A Treatise on the Novel', p.13.

श्री लिडेल इसे एक नवीन साहित्यिक विधा मात्र मानते हैं ।

६ श्री वेबस्टर :

श्री वेबस्टर की परिभाषा कुछ अधिक व्यापक और सर्वांगीण प्रतीत होती है । वह इस प्रकार है – " उपन्यास एक ऐसा कल्पित विशालकाय तथा गद्यमय आख्यान है, जिसमें एक ही कथानक के अन्तर्गत यथार्थ जीवन का प्रतिनिधित्व करनेवाले पात्रों और उनके क्रिया-कलापों का चित्रण रहता है । "[१]

यहां श्री वेबस्टर ने उपन्यास के आकार-प्रकार एवं उसके कथानक, पात्र, और चरित्र-चित्रण आदि तथ्यों के समावेश से उपन्यास की एक सम्यक् परिभाषा प्रस्तुत की है ।

७ श्री अर्नेस्ट ए० बेकर :

श्री बेकर उपन्यास को गद्यमय कल्पित आख्यान के माध्यम से की गई जीवन की व्याख्या मानते हैं ।[२]

इस प्रकार श्री बेकर उपन्यास की अपनी परिभाषा में उसके प्रतिपाद्य मानव-जीवन और उसके " आख्यान " स्वरूप को स्थान देते हैं ।

८ श्री टी० डबलू बीच :

श्री बीच की दृष्टि से उपन्यास में पात्र के आन्तरिक आत्मस्वरूप

---

१. 'Novel is a fictitious prose tale of considerable length - in which characters and actions professing to represent those of real life are portrayed in a plot."
Webster: The New Collegiate Dictionary, page-574.

२. " The interpretation of human life by means of fictitious narrative in prose". Ernest A. Baker: The History of the English Novel, V. III Preface - 5.

का ज्ञान कथा में वर्णित क्रिया-कलापों द्वारा प्राप्त हो और क्रिया कलापों का उद्भव पात्र की आंतरिक मनोभूमि पर हो । " [1]

श्री बीच ने उपन्यास के कथा-तत्त्व, पात्र और उनके क्रिया-कलाप द्वारा उनके चरित्र-चित्रण आदि तत्त्वों की परोक्ष स्वीकृति के साथ उनके निरूपण की मनोविश्लेषणात्मक पद्धति पर विशेष बल दिया है ।

१ श्री हेनरी जेम्स :

श्री हेनरी जेम्स के अनुसार " उपन्यास अपनी व्यापकतम परिभाषा में जीवन का वैयक्तिक और प्रत्यक्ष प्रतिबिम्ब है । " [2]

श्री हेनरी जेम्स उपन्यास को अपने ढंग से की हुई जीवन की सीधी व्याख्या के रूप में मानते हैं ।

१० डा० हरबर्ट जे० मूलर :

" उपन्यास मूलतः मानवीय अनुभव का निरूपण है, चाहे वह यथार्थ हो अथवा आदर्श । और इस प्रकार उपन्यास में अनिवार्यतः जीवन की आलोचना रहती है । [3]

श्री मूलर भी हेनरी जेम्स की भांति उपन्यास को जीवन की व्याख्या मानते हैं, फिर भले उसका निरूपण यथार्थवादी पद्धति से किया जाय या आदर्शवादी

1. 'Soul should be defined by the action of the story and action should be determined by the Soul of the character."
Twentieth Century Novel - T.W. Beach.

2. 'A novel is, in its broadest definition a personal, a direct impression of life'. Henry, James: The Art of Fiction.

3. "The Novel is typically a representation of human experience whether liberal or ideal and therefore inevitably a comment upon life. Herbert J. Muller, Ph.D.
Modern Fiction - A study of Value, p. Foreward XIV.

पद्धति से ।

निष्कर्ष :
oooooooo

उपन्यास सम्बन्धी उपर्युक्त परिभाषाओं का अध्ययन करने पर हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि जहां तक उपन्यास के लक्ष्य का सम्बन्ध है मानव-जीवन की व्याख्या इसका एक मात्र प्रतिपाद्य है । किंतु इसकी निरूपण-पद्धति में वैयक्तिक दृष्टिकोण के कारण विविधता दृष्टिगत होती है । उपर्युक्त परिभाषाओं में सर्वश्री राल्फ, क्रास, और क्लाश रीव यथार्थवादी पद्धति से वस्तु-निरूपण के हामी हैं, तो लार्ड सेसिल, लार्ड लिडल, बेवस्टर मूलर और वेकर कलात्मक पद्धति के । श्री बुच इन दोनों पक्षों से भिन्न मनोविश्लेषणात्मक पद्धति के द्वारा वस्तु-निरूपण के आग्रही हैं ।

पाश्चात्य विद्वानों की भांति हिन्दी साहित्य के मनीषी समालोचकों ने भी उपन्यास के स्वरूप को परिभाषा बद्ध करने का प्रयत्न किया है । किन्तु मूलतः उनके विचार पाश्चात्य विद्वानों द्वारा प्रभावित दृष्टिगत होते हैं । सर्वश्री डा० श्यामसुंदर दास, मुंशी प्रेमचंद, ब्रज रत्नदास, शिवदानसिंह चौहान, डा० गुलाबराय, शिवनारायण, श्री वास्तव, डा० त्रिभुवनसिंह प्रभृति की परिभाषाएँ पाश्चात्य विद्वान सर्वश्री राल्फ, क्रास, हेनरी जेम्स, मूलर, रीव और बेवस्टर आदि से प्रभावित हैं । अस्तु ।

उपर्युक्त विद्वानों की उपन्यास विषयक परिभाषाओं से निम्नांकित तथ्यों की प्राप्ति होती है :-

(१) उपन्यास मानव जीवन की कथात्मक अभिव्यक्ति करनेवाली गद्य-विधा है, जिसे जीवन की कहानी, जीवन का चित्र, या जीवन की व्याख्या कहा जा सकता है ।

(२) यह एक नवीन साहित्यिक विधा है, जो जीवन का संश्लिष्ट चित्र प्रस्तुत करती है ।

(३) यह जीवन के सत्य का कलात्मक उद्घाटन करने वाली विधा है ।

(४) यह सामूहिक मानव-जीवन की व्यापक एवं स्वाभाविक झांकी प्रस्तुत करता है ।

निष्कर्ष के रूप में यह कहा जा सकता है कि मानव के सम्पूर्ण जीवन की उसकी परिस्थितियों के संदर्भ में एवं उसकी विविधताओं के साथ सहज शैली में कलात्मक अभिव्यक्ति ही उपन्यास है ।

उपन्यास के विभिन्न तत्त्व :

यह सर्व विदित है कि उपन्यास के आधुनिक स्वरूप का सर्व प्रथम उद्भव और विकास पश्चिमी देशों में हुआ है । अतः एव उसके विभिन्न तत्त्वों पर पाश्चात्य आचार्यों ने ही सुस्पष्ट और शास्त्रीय विवेचन प्रस्तुत किया है । अंग्रेजी साहित्य के विशिष्ट समालोचक हेनरी हडसन का मत इस विषय में बहुत ही स्पष्ट है । उसने उपन्यास के तत्त्वों का उल्लेख करते हुए लिखा है कि सभी प्रकार की कथात्मक रचना के प्रमुख तत्त्व, कथावस्तु चरित्र-चित्रण, कथोपकथन, देशकाल, शैली और जीवन-दर्शन की अभिव्यक्ति हैं ।[१] श्री हडसन का यह मत लगभग सभी पाश्चात्य और भारतीय विद्वानों को मान्य है । इसी को आधार मान कर उपन्यास के प्रत्येक तत्त्व पर यहां विचार किया जाएगा ।

[१] Henery Hudson: 'Principles of Criticism', p. 121.

कथावस्तु :

उपन्यास में कथावस्तु की प्रधानता के विषय में प्रायः सभी विद्वान एक मत हैं। कथावस्तु उपन्यास का प्राण है, बिना इसके उपन्यास की कल्पना भी असंभव है। इसका निर्माण विविध कथाओं और उपकथाओं से होता है, जो स्वयं अपने आप में एक घटना परंपरा लिए होती है। इनमें से मुख्य कथा आधिकारिक कहलाती है और अन्य कथाएं प्रासंगिक। कथावस्तु के सफल विन्यास पर ही उपन्यास की सफलता और उत्कृष्टता निर्भर रहती है। इस दृष्टि से कथावस्तु में निम्नांकित तीन बातें विशेष रूप से अवलोकनीय हैं।

(१) संघटन :

कथावस्तु में जिन घटनाओं और क्रिया-कलापों को लिया जाय, वे परस्पर सुसम्बद्ध और संगठित होने चाहिए। उनमें अन्विति नितांत आवश्यक है। वास्तव में कथावस्तु का गठन ही उसे घटना-संग्रह से अलग कथानक का रूप देती है।

(२) सम्भाव्यता :

उपन्यास अपने कथानक के लिए जिन घटनाओं की कल्पना के आधार पर सृष्टि करता है, वहां उसे सदैव यह ध्यान रखना पडता है कि उसकी कल्पना-प्रसूत घटनाएं अविश्वसनीय नहीं हो जायें। कल्पनाजन्य होने पर भी उनमें सत्यता का ऐसा आभास हो कि पाठक आश्चर्यचकित और मुग्ध हो उठे।

(३) कुतूहलता :

यह कथावस्तु की मनोरमता का रहस्य है। उपन्यास में पाठक

की रुचि तभी तक बनी रहती है, जब तक उसे पढते हुए उसके मन में परवर्ती घटना के प्रति, " उत्सुकता " बनी रहती है। इसीलिए सफल उपन्यासकार अपनी कृति में कौतूहल बनाये रखने के लिए टुक टुक करके कथावस्तु का रहस्योन्मेष करते जाते हैं। वास्तव में यह स्वयं अपने आप में एक कला है। कथानक का चयन एवं उसकी अभिव्यक्ति इस गुण को दृष्टि में रख कर ही होनी चाहिए।

पात्र और चरित्र-चित्रण :

कथानक के पश्चात् पात्र और उनका चरित्र-चित्रण उपन्यास का दूसरा महत्त्वपूर्ण तत्त्व है। मुंशी प्रेमचंद ने तो उपन्यास को " मानव-चरित्र का चित्र " माना है।[1] वास्तव में उपन्यास का मुख्य विषय है मानव और उसका चरित्र। उपन्यासकार समर्थ पात्रों के चरित्र-चित्रण से ही अपनी कृति को अमरत्व प्रदान करता है। ऐसे उपन्यासों की कथावस्तु भले ही विस्मृत हो जाय, किंतु उनके पात्र पाठक के स्मृति-पटल पर सदैव के लिए अंकित हो जाते हैं। गोदान का होरी और चित्रलेखा का बीजगुप्त, उपन्यास के पठनोपरान्त भी पाठक के लिए आजीवन अविस्मरणीय बने रहेंगे। ऐसे उपन्यास समय की अवधि से परे होते हैं ; कलान्तर में भी इनका महत्त्व कम नहीं होता।

पात्रों का वर्गीकरण कथानक और चरित्र-चित्रण इन दो दृष्टियों से किया जा सकता है। कथानक की दृष्टि से पात्रों के मुख्यतः दो भेद होते हैं। (क) प्रधान पात्र, और (ख) गौण पात्र। जिन पात्रों का उपन्यास के कथानक के साथ सीधा सम्बन्ध होता है और जो कथानक को गति देते हैं, तथा उससे विकास पाते हैं, वे प्रधान पात्र हैं। जिन पात्रों का उपन्यास के कथानक से सीधा सम्बन्ध नहीं

१ मुंशी प्रेमचंद, " साहित्य का उद्देश्य और कुछ विचार ", पृ० ५४

रहता और जो उपन्यास में प्रधान पात्रों के साधन बन कर उपस्थित होते हैं, उन्हें गौण पात्र कहा जाता है ।

चरित्र-चित्रण की दृष्टि से भी उपन्यास में दो प्रकार के पात्र मिलते हैं - १ स्थिर और २ विकसनशील स्थिर पात्र वे हैं, जो उपन्यास के आरंभ से लेकर अंत तक एक से बने रहते हैं ; उनके जीवन की बदलती परिस्थितियों का उनके चरित्र-विकास पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता । कथानक की गति के साथ-साथ पाठकों को उनके चरित्र के विभिन्न पक्षों की जानकारी अवश्य होती है, किंतु उनके चरित्र में कोई भी आमूल परिवर्तन लक्षित नहीं होता । ऐसे पात्र अपने वर्ग के प्रतिनिधि होते हैं । अतः इन्हें प्रतिनिधि पात्र भी कहा जाता है ।

विकसनशील पात्र वे हैं, जो अपनी परिस्थितियों से एवं आसपास के वातावरण से अछूते नहीं रहते । उनकी बाह्य एवं आभ्यंतरिक परिस्थितियों के परिवर्तन के साथ-साथ उनके चरित्र का भी विकास होता रहता है ।

चरित्र-चित्रण की प्रणालियां :

मुख्य रूप से चरित्र-चित्रण की तीन प्रणालियां हैं :- (१) वर्णनात्मक, (२) विश्लेषणात्मक और (३) नाटकीय ।

१ वर्णनात्मक प्रणाली द्वारा उपन्यासकार अपने शब्दों में अपने पात्रों की आकृति, वेशभूषा, चारित्रिक विशेषताएं, उनकी बाह्य और आभ्यंतर मनस्थिति तथा उनके हावभाव और क्रिया-प्रतिक्रिया का वर्णन स्वयं करता चला जाता है ।

२ विश्लेषणात्मक प्रणाली में वह अपने पात्रों की व्यक्त क्रिया-प्रतिक्रिया में न अटका रहकर उनके कारणों की खोज में, पात्रों को उद्वेलित किये

रखनेवाले, उनके भावों और विचारों, उनके चेतन या अचेतन रुझानों और उनकी सूक्ष्मातिसूक्ष्म संवेदनाओं के विश्लेषण द्वारा उनमें कार्य-कारण की शृंखला बैठाता है। मनोवैज्ञानिक उपन्यासों में इस प्रणाली को विशेष प्रश्रय मिला है।

३ नाटकीय प्रणाली में उपन्यासकार स्वयं अपने पात्रों के बीच में नहीं आता। वह उन्हें उपन्यासरूपी रंगमंच पर उन्मुक्त छोड देता है और पात्र स्वयं अपनी क्रिया-प्रतिक्रिया, भ्रू-भंगिमा एवं कथोपकथन द्वारा धीरे-धीरे अपने चरित्र का रहस्योन्मेष करते रहते हैं।

अपनी सुगमता और कृति की सफलता के लिए उपन्यासकार इन प्रणालियों का यथेष्ट प्रयोग कर सकता है।

कथोपकथन :

उपन्यास में इसका प्रयोग कथानक को गति देने, पात्रों के चरित्र का उद्घाटन करने, समाज के किसी वर्ग विशेष की प्रवृत्तियों को प्रकाश में लाने एवं लेखक के उद्देश्य को स्पष्ट करने आदि कई उद्देश्यों से होता है। जो कथोपकथन इन उद्देश्यों की पूर्ति में सहायक नहीं होता, उसके लिए उपन्यास में कोई स्थान नहीं होना चाहिए, चाहे उसका विषय कितना ही आकर्षक और भाषा कितनी ही सुंदर हो। श्रेष्ठ कथोपकथन वही होता है, जो पात्रों की शिक्षा-दीक्षा, परिस्थिति और उनके बौद्धिक विकास के अनुकूल हो तथा अपने कलेवर में उपयुक्त, सुसम्बद्ध, स्वाभाविक एवं संक्षिप्त हो।

वातावरण :

वातावरण या देश-काल का सम्बन्ध उपन्यास के कथानक और पात्र, दोनों से होता है। प्रत्येक उपन्यासकार को अपने कथावस्तु और पात्रों की

पृष्ठभूमि को स्वाभाविकता और मनोरमता प्रदान करने के लिए वातावरण एवं देशकाल का सम्यक् वर्णन प्रस्तुत करना चाहिए । वातावरण और देश-काल के अंतर्गत किसी भी देश या समाज की सामाजिक, धार्मिक, राजनीतिक परिस्थितियाँ, आचार-विचार, रहन-सहन, रीति-रिवाज तथा समाज की विशेषताएँ या उसके दोष आदि का समावेश होता है । ऐतिहासिक उपन्यासों में इसका सर्वाधिक महत्त्व है । प्रकृति-चित्रण और स्थानीय रंग भी देशकाल के ही अंग हैं । इनसे एक ओर जहाँ पृष्ठभूमि की प्रभावात्मकता बढ़ती है, वहाँ ये उसके महत्त्व की वृद्धि भी करते हैं । अतः एक प्रकार से वातावरण अनेक रूपों में ऐतिहासिक उपन्यासों के शिल्प-विधान का अत्यधिक सहायक तत्त्व कहा जा सकता है ।

जीवन दर्शन और उद्देश्य :

वास्तव में यथार्थ रूप से जीवन के पारखी और ज्वलंत सत्य से उद्बुद्ध उपन्यासकार ही अपने अनन्य अनुभवों के आधार पर अपनी कृतियों में जन-जीवन के श्रेयार्थ कहीं न कहीं अपना जीवन-दर्शन प्रस्तुत कर जाते हैं । मानवता के लिए यही उनकी कृति का विशेष योगदान होता है ; केवल मनोरंजन से रचना के मूल्य में कोई विशेष वृद्धि नहीं होती । यहाँ यह भी ध्यान देने योग्य बात है कि उपन्यास में निहित जीवन-दर्शन को समझने के लिए लेखक के निजी दृष्टिकोण का बोध विशेष-रूप से सहायक हो सकता है ।

प्रस्तुत अध्ययन में हमारा प्रतिपाद्य ऐतिहासिक उपन्यासों से सम्बन्धित है । अतः उपन्यास के इतर भेदों पर विचार न कर केवल ऐतिहासिक उपन्यास पर ही संक्षेप में विचार कर लेना उपयुक्त होगा ।

ऐतिहासिक उपन्यास : (इतिहास और उपन्यास) : और इतिहास : तुलनात्मक विवेचन :

पूर्ववर्ती विवेचन के अनुसार ऐतिहासिक उपन्यास ऐतिहासिक तथ्य

और औपन्यासिक कला दोनों का संतुलित संयोजन है। बाह्यतः इतिहास और उपन्यास दोनों एक-दूसरे के विरोधी लगते हैं। किंतु इनके आंतरिक स्वरूप का अध्ययन करने पर दोनों में पर्याप्त साम्य भी दृष्टिगत होता है।

इतिहास के आधार हैं प्रामाणिक एवं आधारभूत तथ्य, जिनके आधार पर इतिहासकार अपने इतिहास की रचना करता है। अपनी ओर से वह इन तथ्यों में कोई भी न्यूनाधिक परिवर्तन नहीं कर सकता, वरन् सचाई के साथ प्राप्त तथ्यों का यथामति उद्घाटन करना ही उसके लिए वांछनीय है, इतना ही नहीं, वरन् उसका परम कर्तव्य भी। उपन्यास में भी तथ्य तो होते हैं, किन्तु उपन्यासकार उपर्युक्त बंधन को स्वीकार नहीं करता।

वस्तुतः ऐतिहासिक उपन्यास पहले उपन्यास है, बाद में अन्य कुछ है। जीवन की व्याख्या या उसका चित्र उपस्थित करने के लिए ऐतिहासिक तथ्यों का उसमें कलात्मक संयोजन हुआ करता है। अतः उपन्यासकार उनमें कला की साधना के लिए कल्पना का समुचितउपयोग भी कर सकता है।

कोरे तथ्यों के अभिधात्मक निदर्शन से तो इतिहास का सर्जन भी सर्वथा असम्भव है। अतः इतिहासकार को भी तथ्य समर्थित कल्पना अथवा अनुमान का सहारा लेना ही पड़ता है। दूसरी ओर उपन्यास भी यथार्थ जीवन के चिरंतन सत्य की अभिव्यक्ति करता है जिसे यथार्थ एवं सम्भाव्य कल्पना द्वारा उपन्यासकार एक भव्य स्वरूप प्रदान करता है।

लक्ष्य की दृष्टि से भी दोनों ही मानव-जीवन को प्रस्तुत करते हैं। उपन्यास जीवन की सम्यक् व्याख्या द्वारा मानव के विचारों और भावनाओं में सामंजस्य की स्थापना कर उसे जीवन के चिरंतन सत्य का बोध कराता है, तो इतिहास मानव जाति के पूर्वार्जित अनुभव उनकी परंपरा एवं तज्जन्य ज्ञान, तथा मानव के उत्थान-

पतन और उसके पराक्रम-अभियानों का निरपेक्ष विवरण प्रस्तुत करता है ।

इतिहास और उपन्यास की मानव-जीवन के लिए इस उपयोगिता के कारण ही ऐतिहासिक उपन्यास की विधा अस्तित्व में आई एवं काफी लोकप्रिय बनी । डा० जगदीशचंद्र गुप्त ने अपने लेख " इतिहास और ऐतिहासिक उपन्यासकार " में इसी तथ्य की ओर संकेत किया है जिसे लक्ष्य कर लेना यहां आवश्यक है, " सुदूर अतीत में दृष्टि-निक्षेप करने पर विदित होता है कि एक समय इतिहास और कथा-साहित्य दोनों एक दूसरे से ओत प्रोत थे । किंतु वैज्ञानिक युग में आकर वे एक दूसरे से पृथक् हो गये और ऐतिहासिक पुनरावृत्ति की भांति ऐतिहासिक उपन्यास में आज पुनः इन दोनों का नूतन समन्वय दृष्टिगत होता है । " [1]

इतिहासकार घटित घटनाओं को अपने तर्क और अनुमान के सहारे शृंखलाबद्ध कर तिथि निर्धारण पूर्वक उनका यथातथ्य वर्णन प्रस्तुत करता है, किंतु उसके इस प्रयत्न में मानव-जीवन का बहुत-सा भाग अव्यक्त ही रह जाता है । ऐतिहासिक उपन्यासकार इस अभाव की पूर्ति करता है । इसके लिए वह ऐतिहासिक व्यक्ति के साथ संभावनाओं के विनियोजन द्वारा एक विश्वसनीय सत्य का सर्जन करता है । इसके परिणामस्वरूप इतिहास के शुष्क व नीरस तथ्यों को वह कल्पना के आश्रय से सुंदर, सरस और आकर्षक बनाने में सफल होता है ।

इतिहास के नीरस तथ्य, निर्जीव पात्र और शून्य वातावरण ऐतिहासिक उपन्यास में किस प्रकार अद्भुत रूप से सरस, सजीव, और सप्राण हो उठते हैं, इस विषय में श्री वृंदावन लाल वर्मा का यह कथन द्रष्टव्य है, " इतिहास में किसी विशेषकाल में घटी घटनाओं का विवरण होता है, उन घटनाओं से सम्बन्धित पात्रों का एक लेखा होता है । परंतु ऐतिहासिक उपन्यासों में उन घटनाओं को कल्पना के द्वारा आकर्षक और रमणीय बनाया जाता है और कल्पना भी ऐसी जो सीमा का

1 आलोचना, 'उपन्यास विशेषांक', अक्टूबर, १९५४ ।

अतिक्रमण न कर सके, इतिहास की आत्मा को आघात न पहुंचा सके, घटनाओं के स्वरूप को विकृत न कर सके। - - - -

इतिहास के पात्र मृत प्रतीत होते हैं, पर वही पात्र जब ऐतिहासिक उपन्यासों की सीमा में प्रवेश करते हैं, तब हमें नवीन रक्त और मांस से युक्त जीवनधारी प्रतीत होते हैं। जहां इतिहास हमें शुष्क और नीरस हड्डियां देता है, वहां ऐतिहासिक उपन्यासकार उन्हीं हड्डियों में रक्त और मांस का सृजन कर उन्हें ऐसा सुंदर शरीर प्रदान करता है, जिसमें जीवन होता है, गति होती है, सत्य होता है, और उसको रंगीन बनाने वाले कल्पना के धागे (उपकरण) भी। - - - - -

ऐतिहासिक उपन्यासों में उस युग के सामाजिक और सांस्कृतिक जीवन के भी स्पष्ट चित्र रहते हैं, जो इतिहास में हमें नहीं मिलते और यदि मिलते भी हैं, तो अत्यंत धूमिल, जिन पर समय की स्याही चढ़ चुकी होती है।[1]

श्री वर्माजी के उपर्युक्त कथन से निम्नलिखित तथ्य प्रकाश में आते हैं :-

(१) कल्पना के सहारे ऐतिहासिक उपन्यासकार शुष्क तथ्यों को सरस, आकर्षक एवं रमणीय बना सकता है।

(२) तथा उसके प्रयोग में वह वहीं तक स्वतंत्र है, जहां तक उसके द्वारा प्रस्तुत नव सर्जित सत्य इतिहास की मूल चेतना के विरुद्ध नहीं जाता।

(३) उक्त प्रक्रिया द्वारा जिस नई चेतना तथा जिन पात्रों की सृष्टि होती है, उसमें सत्य के साथ सुंदर का अपूर्व समन्वय सहज ही हो जाता है।

१ आलोचना उपन्यास विशेषांक, अक्टूबर, १९५४

(४) कालगत विस्तृत अंतराल के परिणाम स्वरूप सामाजिक एवं सांस्कृतिक जीवन के चित्र जो कालांतर में धूमिल हो जाते हैं, उन्हें उपन्यासकार अपनी तूलिका के सहारे एक नई चमक एवं आभा प्रदान करता है ।

कहना न होगा कि उपर्युक्त चारों विशेषताओं की विधायिका उसकी कल्पना शक्ति है और वही कृति को इतिहास के घेरे से निकाल कर सर्जनात्मक साहित्य की कोटि में बिठा देती है ।

इतिहास में जाति, समाज और राष्ट्र का विशेष महत्त्व है और व्यक्ति का स्थान गौण । इसके विपरीत ऐतिहासिक उपन्यास में व्यक्ति का स्थान मुख्य है । इस विशेषता के कारण इतिहास द्वारा उपेक्षित घटना-प्रसंग और पात्रादि ऐतिहासिक उपन्यास में अभिव्यक्ति पा प्रकाश में आते हैं । वहां जाति, समाज और राष्ट्र को पृष्ठभूमि के रूप में प्रयुक्त कर विभिन्न समयों पर होने वाली व्यक्ति की विविध अव्यक्त आंतरिक अनुभूतियों का विश्लेषण किया जाता है, जबकि इतिहास संयोजित सामग्री में से उसी विशिष्ट अंश को ग्रहण करते हैं, जो राष्ट्र और जाति के उत्थान-पतन से सम्बन्धित हो । वस्तु और पात्र के अतिरिक्त वातावरण की सृष्टि में भी उपन्यासकार द्वारा ऐतिहासिक सामग्री और अपेक्षित कल्पना का विनियोजन उल्लेखनीय है जिसे हम पूर्ववर्ती पृष्ठों के अंतर्गत लक्ष्य कर चुके हैं ।

निष्कर्ष :
oooooooo

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि ऐतिहासिक विवेचन से ऐतिहासिक उपन्यास तक की यात्रा एक प्रकार वैज्ञानिक विवेचन एवं कलात्मक सर्जन की एक ऐसी प्रक्रिया है जो सत्य को सौंदर्य से मंडित कर देती है । इसी कारण इतिहास विज्ञान है एवं ऐतिहासिक उपन्यास कला अथवा साहित्य । सामान्य सत्य और साहित्यगत सत्य में जो अंतर हुआकरता है, उसकी संभावना को

इन दोनों के संदर्भ में अस्वीकार नहीं किया जा सकता ।

इतिहास के नीरस और शुष्क तथ्य, पात्र एवं वातावरणादि ऐतिहासिक उपन्यासकार की सर्जनशील कल्पना-शक्ति का स्पर्श पा सरस, सजीव एवं अनुप्राणित हो उठते हैं, जबकि इतिहासकार देशकाल का एक क्षीण रेखांकन मात्र प्रस्तुत कर आगे बढ़ता है । अतः इसमें संदेह नहीं कि ऐतिहासिक उपन्यासकार उसमें विविध पक्षीय जीवन के विविध रंगों की छाया के उभार से उसे प्राणवान बना जीवन की अस्मिता एवं आकर्षण प्रदान कर एक जीवंत चित्र के रूप में प्रस्तुत करता है ।

ऐतिहासिक उपन्यास : परिभाषा :

ऐतिहासिक उपन्यास के सम्बन्ध में जो परिभाषाएं मिलती हैं वे दो प्रकार की हैं । प्रथम, आलोचकों द्वारा और द्वितीय स्वयं ऐतिहासिक उपन्यासकारों द्वारा प्रस्तुत । इनमें से प्रमुख परिभाषाओं को यहां क्रमशः प्रस्तुत किया जा रहा है ।

१ श्री एच० बटरफील्ड : (H. Butterfield)

इस अंग्रेज विद्वान् ने अपनी पुस्तक " दी हिस्टोरीकल नावेल " में ऐतिहासिक उपन्यास के स्वरूप और उसके विविध पक्षों का सुंदर एवं सम्यक् विवेचन किया है । अपनी उपर्युक्त पुस्तक के आमुख में उन्हों ने लिखा है - " ऐतिहासिक उपन्यास उपन्यास के रूप में इतिहास का एक स्वरूप है, उसकी गवेषणात्मक कृति है, वह अतीत की शोध का एक मार्ग है । " [१]

१ The Historical Novel seeks to estimate the novel as a work of ressurrection, a form of History, a way of tracing the past.'

H. Butterfield - 'The Historical Novels' Preface.

इसी बात को स्पष्ट करते हुए वे उसे इस प्रकार परिभाषित करते हैं :-

" ऐतिहासिक उपन्यास कथा साहित्य और इतिहास दोनों की एक विधा है। वह एक कहानी है, एक आविष्कार है, जो केवल अतीत के जीवन के प्रति सत्यपूर्ण होने का दावा करता है। " [1]

उपर्युक्त कथातत्त्व और इतिहास के विषय में उनका यह मत है [2] कि वे एक-दूसरे को शक्तिशाली बनाते हुए परस्पर संवर्द्धित और परिवर्द्धित होते हैं और पाठक को विशेष रूप से आकर्षित या प्रभावित कर सकते हैं।

संक्षेप में श्री बटर फील्ड ने यहां ऐतिहासिक उपन्यास को इतिहास और कथा साहित्य का समन्वय बता कर उसके स्वरूप, अतीत के वास्तविक चित्र की अभिव्यक्ति में उसके लक्ष्य, एवं कथात्मक रूप में इतिहास के विषय-वस्तु के आकर्षक निरूपण के उल्लेख द्वारा उसकी शैली पर अपने विचार व्यक्त किये हैं।

२ श्री आर्थर मी :-

श्री आर्थर मी ने अपनी पुस्तक " ए स्टडी आफ् इंगलिश फिक्शन, सेल्फ एडयूकेटर " में ऐतिहासिक उपन्यास के सम्बन्ध में अपने विचार इस प्रकार प्रकट

1. The Historical Novel is a form of fiction as well as of history. It is a tale, a piece of invention only it claims to be true to the life of the past.'
H. Butterfield - The Historical Novels, p. 4.

2. (In the historical novel, history and fiction can enrich and amplify one another each making the other powerful. And they can make a special kind of appeal to the reader.'
H. Butterfield - The Historical Novels, p.7.

किये हैं :-

" ऐतिहासिक उपन्यासों का लेखक इतिहास की गौण सच्ची घटनाओं को, अपने कथानक के अनुकूल बनाने के लिए बदल देता है और कुल मिलाकर कुछ ऐसा चित्र उपस्थित करता है, जो इतिहास की अपेक्षा जीवन के अधिक निकट होता है । केवल अपनी मानसिक कल्पनाओं द्वारा उपन्यास-कार हमारे समक्ष सचाई का एक ऐसा स्वरूप उपस्थित करता है, जो इतिहास से अधिक विशद् और स्थायी होता है । अतः एव यह कहना कि ऐतिहासिक उपन्यास कल्पना प्रसूत अंशों के सम्मिश्रण के कारण, इतिहास के समकक्ष, गंभीर अध्ययन का विषय तथा किसी के उपयोग की वस्तु नहीं है, साहित्य के सम्बन्ध में गुरुतर अज्ञान का प्रदर्शक है । "[1]

यहाँ श्री मी ने ऐतिहासिक उपन्यास को इतिहास की अपेक्षा अतीत के अधिक निकट का और स्थायी चित्र बताया है ।

३ श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुर :

श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने " साहित्य " के अंतर्गत "ऐतिहासिक उपन्यास " लेख में ऐतिहासिक उपन्यास सम्बन्धी अपने विचार निम्नांकित रूप में प्रकट किये हैं ।

" उपन्यास के अंदर इतिहास के मिल जाने से जो एक विशेष रस संचरित

---

[1] Arther Mee : 'A Study of English Fiction, SelfEeducator, [redacted].p. 24[redacted]

होता है, उपन्यासकार एक मात्र उसी एक ऐतिहासिक रस के लालची होते हैं, उसके सत्य की उन्हें कोई विशेष परवाह नहीं होती। अर्थात् लेखक चाहे इतिहास को अखंड रखकर रचना करे या तोड फोड कर, यदि वे इतिहास-रस की अवतारणा कर सकें, तो उन्हें उद्देश्य में कृतकार्य समझना चाहिए। सर्वजन विदित सत्य को एक दम उलटा कर देने से रसभंग हो जाता है। एकांत सत्य के लिए इतिहास और आनंदोपयुक्त सत्य के लिए ऐतिहासिक उपन्यास उपादेय है। "[1]

श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने यहाँ अपनी कवि-प्रवृत्ति के अनुरूप ऐतिहासिक उपन्यास की रसात्मक परिभाषा प्रस्तुत की है। उनकी दृष्टि से ऐतिहासिक उपन्यास ऐतिहासिक रस का विधायक है और उसमें लेखक की कल्पना का प्रयोग उक्त रस के विधायक के रूप में ही ग्राह्य है।

४ श्री पदुमलाल पन्नालाल बक्षी :

श्री बक्षीजी ने " हिन्दी कथा साहित्य " में ऐतिहासिक उपन्यास की कोई परिभाषा न देकर निम्नलिखित शब्दों में उसका महत्त्व मात्र व्यक्त किया है :-

" ऐतिहासिक उपन्यासों में हम अतीत गौरव को प्रत्यक्ष देख लेते हैं, और उनसे हार जीवन की चिरंतन महिमा को जान लेते हैं। "[2]

५ डा० गुलाबराय :

डा० गुलाबराय ने ऐतिहासिक ज्ञान एवं सम्भाव कल्पना के समन्वय

१ श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुर, " साहित्य ", पृ० १२५, संस्करण १९५७

२ श्री पदुमलाल पन्नालाल बक्षी, " हिंदी कथा साहित्य ", पृ० २३६

पर बल देते हुए ऐतिहासिक उपन्यास को निम्नांकित शब्दों में परिभाषित किया है :

" ऐतिहासिक उपन्यास में लेखक अपने इतिहास-ज्ञान तथा कल्पना द्वारा अपने प्रतिपाद्य ऐतिहासिक युग की मान्यताओं, विश्वासों तथा वातावरण का सजीव चित्र प्रस्तुत करने का प्रयत्न करता है। कथानक को रोचक बनाने के लिए अथवा जहां कहीं ऐतिहासिक तत्त्व विशृंखलित हो, वहां नवीन घटनाओं का निर्माण कर शृंखला जोडने के लिए ही कल्पना का उपयोग होता है। " [1]

उपर्युक्त परिभाषाओं के आधार पर ऐतिहासिक उपन्यास के जिस स्वरूप पर प्रकाश पडता है उसमें और पूर्ववर्ती पृष्ठों में प्रस्तुत इतिहास और ऐतिहासिक उपन्यास से सम्बन्धित विवेचन में कोई अंतर दृष्टिगोचर नहीं होता। सर्व श्री बटर फील्ड, आर्थर, रवीन्द्रनाथ ठाकुर के विवेचन इतिहास और कल्पना के कला-सापेक्ष्य समन्वय को ऐतिहासिक उपन्यास की व्यावर्तक विशेषता के रूप में अभिव्यक्त करते हैं।

ऐतिहासिक उपन्यासकारों के तद्विषयक विचार :

१. श्री किशोरीलाल गोस्वामी :

ऐतिहासिक उपन्यास तारा की भूमिका में - " हमने अपने बनाये उपन्यासों में ऐतिहासिक घटना को गौण और अपनी कल्पना को मुख्य रखा है और कहीं कहीं तो कल्पना के आगे इतिहास को दूर से ही नमस्कार भी कर दिया है। इसलिए हमारे उपन्यास के प्रेमी पाठक हमारे अभिप्राय को भलीभांति समझ लें कि यह उपन्यास है, इतिहास नहीं। यहां कल्पना का राज्य है, यथेष्ट लिखित इतिहास

---

१ डा० गुलाबराय, आलोचना 'उपन्यास विशेषांक', अक्टूबर, १९५६।

का नहीं । [1]

पूर्ववर्ती विवेचन में व्यक्त कल्पना के बंधन को श्री गोस्वामीजी अपने ऐतिहासिक उपन्यासों में स्वीकार करने को तैयार नहीं हैं ।

२ श्री राहुल सांकृत्यायन :

श्री राहुल जी प्रभृति लेखक निर्बाध कल्पना का विरोध करके ऐतिहासिक तथ्यों की अनुरूपता पर बल देते हैं :-

" ऐतिहासिक उपन्यास में हमें ऐसे समाज या उसके व्यक्ति का चित्रण करना पड़ता है, जो सदा के लिए विलुप्त हो चुका है, किन्तु उसने कुछ पद-चिह्न जरूर छोड़े हैं, जो उनके साथ मनमानी करने की इजाजत नहीं देते । " [2]

३ आचार्य चतुरसेन शास्त्री :

आपका मंतव्य है कि

" ऐतिहासिक उपन्यासों में देशकालजन्य परिस्थितियों का प्राधान्य रहता है । उपन्यासकार इतिहास के ढांचों और संकेतों से उसकाल के जीवित रूपों की कल्पना कर सभी संभावित जीवन-वृत्तों को उपन्यास के रूप में प्रस्तुत करता है । ऐतिहासिक उपन्यासों में लेखक का काम तत्कालीन घटनाओं की सूची देना नहीं, वरन् तत्कालीन समाज-प्रवाह का वेग दिखाना होता है । " [3]

---

१ " श्री किशोरीलाल गोस्वामी " भूमिका " तारा " की भूमिका, पृ० १

२ राहुल सांकृत्यायन, आलोचना उपन्यास विशेषांक, पृ० १८०

३ आ० चतुरसेन शास्त्री, हिन्दी भाषा साहित्य का इतिहास, पृ० ७०, सं० १९४९ ई०

अतीतकालीन समाज और व्यक्ति के यथातथ्य चित्रण से आगे बढ कर यहां देशकाल और वातावरण के सर्वांगीण निरूपण पर बल दिया गया है ।

४ श्री वृंदावनलाल वर्मा :

आपके विचार हम पूर्ववर्ती पृष्ठों में प्रस्तुत कर चुके हैं । आपने ऐतिहासिक उपन्यास में ऐतिहासिक घटनाओं को आकर्षक और रमणीय बनाने, उनके नीरस पात्रों को सरस और सजीव रूप देने एवं उनके युग के वातावरण को अनुप्राणित करने के लिए तथ्य संगत एवं सर्जनशील कल्पना के प्रयोग को आवश्यक बताया है । उनके विचारानुसार घटना, पात्र, और वातावरण तीनों के सम्यक् निरूपण में ऐतिहासिक उपन्यास की सफलता निहित है ।

५ डा० रांगेय राघव :

" इतिहास विकृत न हो, कथा चले, रोचक हो, मनुष्य सजीव लगे । " [१]

उपर्युक्त संक्षिप्त परिभाषा द्वारा डा० रांगेय राघव वृन्दावन लाल वर्मा से सहमत दृष्टिगत होते हैं ।

६ डा० हजारी प्रसाद द्विवेदी :

" साधारणतः ऐसे उपन्यास जिनमें अतीतकालीन पात्र वातावरण और घटनाओं के ज्ञात तथ्यों को कल्पना से मांसल और जीवंत बनाकर रखने का प्रयास

१ डा० रांगेय राघव, पत्र सं० ६ उद्धृत " हिन्दी के ऐतिहासिक उपन्यासों का आलोचनात्मक अध्ययन " डा० गोविंदराम शर्मा

होता है, ऐतिहासिक उपन्यास कहे जाते हैं। "[1]

आचार्य द्विवेदी भी पूर्ववर्ती समालोचकों की भांति ऐतिहासिक उपन्यास में तथ्य और कल्पना के सुष्ठु समन्वय के समर्थक हैं।

निष्कर्ष :

उपर्युक्त विवेचकों और ऐतिहासिक उपन्यासकारों के विचारों का अध्ययन करने के उपरांत ऐतिहासिक उपन्यास की परिभाषा हम निम्नांकित रूप में प्रस्तुत कर सकते हैं।

किसी देश और काल के ऐतिहासिक तथ्यों से सम्बन्धित विषय-वस्तु के आधार पर मानव-जीवन का तथ्य से सामंजस्य पूर्ण कल्पना के द्वारा प्रस्तुत गद्य कथानक ऐतिहासिक उपन्यास है।

ऐतिहासिक उपन्यासों के तत्त्व:

उपन्यास हो या ऐतिहासिक उपन्यास, जहां तक उनके तत्त्वों का प्रश्न है, कथा-साहित्य की सभी विधाओं के तत्त्व एक से (कथावस्तु, पात्र और चरित्र-चित्रण, कथोपकथन, वातावरण, भाषा-शैली और उद्देश्य) होते हैं। किंतु ऐतिहासिक उपन्यासों में उनका नियोजन और कलात्मक संयोजन ऐतिहासिकता के सम्यक् निर्वाह को ध्यान में रखकर किया जाता है। इस दृष्टि से ऐतिहासिक उपन्यास के तत्त्वों के सम्बन्ध में यहां कुछ विचार कर लेना वांछनीय होगा। वस्तुतः ये एक प्रकार से ऐतिहासिक उपन्यासों की तत्त्वगत या वस्तु और शिल्पगत विशेषताएं

१ डा० हजारी प्रसाद द्विवेदी, ऐतिहासिक उपन्यास, प्रकृति और स्वरूप, सं० गोविंदजी, पृ० १७

ही कही जायेंगी जैसा कि परवर्ती विवेचन से प्रकट है ।

कथावस्तु :
oooooooo

प्रायः ऐतिहासिक उपन्यास अपनी सर्जन-प्रक्रिया में किसी न किसी सांस्कृतिक, राष्ट्रीय, सामाजिक अथवा राजनीतिक उद्देश्य से प्रेरित होते हैं । अतः कथावस्तु के चयन का उनसे प्रभावित होना स्वाभाविक ही है । अभिप्रेत उद्देश्य की सिद्धि के लिए उपन्यासकार कथावस्तु के चयन के लिए इतिहास की ओर उन्मुख होता है और ऐतिहासिक ज्ञान के स्रोतों से सामग्री ग्रहण करता है । इस सामग्री के बावजूद भी कई बार उसे वे तथ्य अधूरे और अल्प समर्थ प्रतीत होते हैं, जिनके बल पर वह अभिप्रेत युग के जीवन की व्याख्या को पूर्णतया प्रस्तुत कर सके । ऐसी स्थिति में कल्पना-शक्ति का सहारा लेकर वह ऐतिहासिक संभाव्यता को प्रस्तुत करके उपर्युक्त अभाव की पूर्ति करता है । इस कारण उसके द्वारा प्रकाशित ऐतिहासिक सत्य इतिहास की पुस्तकों से प्राप्त सत्य की तुलना में अधिक सप्राण, मनोज्ञ और मनोरम तथा विश्वसनीय भी प्रतीत हो सकता है । यही कारण है कि अनेक घटना-प्रसंगों के सम्बन्ध में जहां इतिहास मौन है, ऐतिहासिक उपन्यासकार अपनी कल्पना-शक्ति के सहारे तद्गत ऐतिहासिक संभाव्यता को अपनी प्रतिभा के आलोक से मंडित करके उपस्थित कर सकता है । किंतु यह वांछनीय है कि उसकी यह कल्पना ऐतिहासिक सम्भाव्यता पर आधारित हो और उससे इतिहास की सीमाओं का उल्लंघन न हो । अतः एक प्रकार से वह ऐतिहासिक गवेषणा का भी कार्य करता है । किन्तु वह वैज्ञानिक नहीं अपितु कला-साधना की गवेषणा कही जायगी ।

अतएव ऐतिहासिक उपन्यासों का अध्ययन करते समय हमें उनके कथावस्तु के अन्तर्गत आनेवाले घटना-प्रसंगों की ऐतिहासिकता के सम्बन्ध में सर्वतोमुखी विचार कर लेना चाहिए, अर्थात् कहां तक लेखक इतिहास के विशुद्ध घटना-प्रसंगों के

आधार पर अपनी रचना का निर्माण करता है और कहाँ एवं किस सीमा तक वह कल्पना का आश्रय लेता है, तथा कहाँ तक उसकी वह कल्पना-सृष्टि ऐतिहासिक सम्भाव्यता द्वारा अनुमोदित है ।

इतिहास से कथावस्तु ग्रहण करने के उपरांत ऐतिहासिक उपन्यासकार का कर्तव्य है, उसे सुगठित एवं शृंखलाबद्ध रूप में व्यवस्थित करना । इतिहास से उसे सूक्ष्म रेखा-चित्र मिलता है, जिसको उसे अपनी कल्पना द्वारा सुविकसित और कलात्मक रूप देना पड़ता है । कथा के इस नियोजन में ही उसकी मौलिकता और उसके शिल्प का कौशल परिलक्षित होता है । इसी से वह अपने कथानक को रोचक, सजीव और आकर्षक बना सकता है । कथानक का संघठन करते समय लेखक को उसके स्वरूप, गुणांकन, उपयोगिता आदि का भी पूर्णतया ध्यान रखना चाहिए ।

पात्र और चरित्र-चित्रण :

कथा-वस्तु की उपर्युक्त विशेषता के कारण ऐतिहासिक उपन्यास का लेखक इस बात के लिए स्वतंत्र होता है कि वह आवश्यकतानुसार इतिहास-विश्रुत पात्रों या चरित्रों के अतिरिक्त काल्पनिक पात्रों की भी सृष्टि करे । ऐसे उपन्यासों के पात्रों की दूसरी उल्लेखनीय विशेषता उनकी सजीवता की है । इतिहास के पात्र यद्यपि निर्जीव और शुष्क होते हैं, किंतु इतिहास में इनका अंकित व्यक्तित्व लेखको इनके साथ मनमानी करने की इजाजत नहीं देता । ऐतिहासिक उपन्यासकार इन्हें इतिहास से विकसित रूप में ही ग्रहण करता है और उपन्यास में यथा-समय घटित होनेवाले उनके क्रिया-कलाप या अन्य घटना-व्यापार द्वारा उन्हें शनैः शनैः प्रकाशित या उद्घाटित करता रहता है ।

ऐतिहासिक उपन्यासकार का गौरव इसी में है कि वह इतिहास के नीरस और अनाकर्षक पात्रों में अपनी कला द्वारा प्राण संचार कर उन्हें सरस,

चित्ताकर्षक बना एक जीवंत और अविस्मरणीय पात्र-सृष्टि के रूप में प्रस्तुत करे। वास्तव में ऐतिहासिक उपन्यासकार की इस कला-दक्षता के कारण ही ऐतिहासिक पात्र अलग अलग ऐतिहासिक उपन्यासकारों की कृतियों में अपने व्यक्तित्व के उत्कर्ष और आकर्षण की विविधता के साथ दृष्टिगत होते हैं।

कथोपकथन :

इतिहास के शुष्क तथ्यों और नीरस पात्रों के आधार पर लिखे जाने वाले ऐतिहासिक उपन्यास में कथोपकथन उन्हें सरस और आकर्षक बनाने में बड़ा योग-दान देता है। वह उपन्यास में एक प्रकार की सजीवता-सी उत्पन्न कर देता है। उपन्यास में जिन पात्रों के प्रति पाठक की विशेष रुचि होती है, उन्हें वार्तालाप करते देख कर वह अपनी मानस भूमि पर उन्हें जीवंत स्वरूप में देखने लगता है और अनजाने ही उनके साथ गहरी आत्मीयता स्थापित कर लेता है।

अतः यह आवश्यक है कि कथोपकथन ऐतिहासिक उपन्यास के पात्रों के उपयुक्त हों, उसका सर्जन उनकी शिक्षा-दीक्षा, सामाजिक स्थिति और उनके वैयक्तिक स्वभाव और गुणों के अनुरूप हो। साथ ही, कथानक के विकास, पात्रों की व्याख्या, और लेखक के उद्देश्य की पूर्ति की दृष्टि से भी इसकी उपयोगिता अवलोकनीय है।

वातावरण :

जैसा कि संक्षेप में निर्दिष्ट किया जा चुका है कि वातावरण ऐतिहासिक उपन्यास का मुख्य और आधारभूत तत्त्व है। यह वह चित्रफलक है, जिसके आधार पर ऐतिहासिक उपन्यासकार इतिहास के पात्रों और उनके क्रिया-कलापों को अपनी कल्पना की तूलिका और सम्भाव्यता के विविध रंगों से रंग कर उन्हें चित्ताकर्षक, मनोहर और जीवंत सा बना देता है। अतः ऐतिहासिक उपन्यासकारों

के लिए यह आवश्यक है, कि वे औपन्यासिक देश-काल की राजनीतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक और सर्वांगीण परिस्थितियों का पूर्ण एवं सजीव चित्रण प्रस्तुत करें। उस समय के राजा, प्रजा, सैनिक, अधिकारी आदि विविध वर्गीय व्यक्तियों के रहन-सहन, उनकी गतिविधियां, उनके रीतिरिवाज, उनकी मनोवृत्तियां और उनके आचार-विचार आदि के सम्यक् और तादृक् चित्रण उनकी कृतियों में अवश्यमेव होने चाहिए। इस विषय में श्री शिवनारायण श्री वास्तव का निम्नांकित कथन सर्वथा समीचीन है :-

> " ऐतिहासिक उपन्यासों में देशकाल का यह चित्रण ही उनका प्राण है। यही उनको विभिन्नता प्रदान करके उनकी पृथक् कोटि स्थापित कर देता है। बिना इसके ऐतिहासिकता का कोई अर्थ नहीं। इन उपन्यासों का आकर्षण और साहित्यिक मूल्य बहुत कुछ उनके द्वारा किये गये भूभाग, और काल-विशेष के जीवन, रीति-नीति, रहन-सहन, आदि के वर्णन पर निर्भर रहता है और उनकी उत्तमता यहां पर वर्णनों की यथार्थता, तद्रूपता, और शक्ति पर निर्भर रहती है। "

उपर्युक्त कथन में विद्वान् लेखक ने ऐतिहासिक उपन्यासों में ऐतिहासिक वातावरण के निरूपण को उनके प्राण और उनकी उत्तमता की कोटि का निर्णायक कह उसकी सर्वोपरि महत्ता निर्दिष्ट कर दी है। घटना-प्रसंग और पात्रों के साथ इसके निरूपण की उत्कृष्टता ऐतिहासिक उपन्यासों के विविध वर्गों को इंगित करती है।

भाषा-शैली :

ऐतिहासिक उपन्यासों में भाषा का प्रयोग करते समय विशेष सावधानी की आवश्यकता है। उपन्यास के देश-काल, पात्र की स्थिति, उसके धार्मिक

---

१ श्री शिवनारायण श्रीवास्तव : हिन्दी उपन्यास : पृष्ठ ४५२।

विश्वास और सैद्धांतिक विचार आदि की ऐतिहासिकता उपन्यास में प्रयुक्त भाषा में स्पष्टतया व्यक्त होनी चाहिए। इसके अतिरिक्त उपन्यास के कथानक का भार वहन करने के लिए भाषा का सरल, सरस, और प्रवाहमयी होना तो सर्वमान्य है ही।

शैली की दृष्टि से प्रायः ऐतिहासिक उपन्यास इतिहासात्मक शैली में ही लिखे जाते हैं। आत्म चरित प्रधान शैली का प्रयोग प्रायः विरल ही है। गुणों की दृष्टि से शैली का प्रवाहमयी, चित्ताकर्षक और रंजनात्मक होना लेखक की वैयक्तिक उपलब्धियों पर निर्भर है।

उद्देश्य :

कथावस्तु की विवेचना के आरंभ में ही हम यह निर्दिष्ट कर आए हैं कि प्रत्येक ऐतिहासिक उपन्यास की रचना के मूल में लेखक का अपना उद्देश्य होता है। इसीके अनुसार वह कथावस्तु का चयन, पात्रों का अभिव्यंजन, एवं कथोपकथन का सर्जन करता है। सृष्टि की विविधता की प्रत्यक्षता में ऐतिहासिक उपन्यासकार के उद्देश्य भी विविध हो सकते हैं, उन्हें किसी संख्या में परिसीमित करना दुष्कर है। फिर भी स्थूल रूप में ऐतिहासिक उपन्यास के निम्नांकित उद्देश्य हो सकते हैं :-

१ अतीत के प्रति प्रेम की प्रवृत्ति और उसका पुनः संस्थापन,
२ राष्ट्रीय गौरव का उन्मेष,
३ अतीत की आधुनिक व्याख्या और उसके माध्यम द्वारा वैयक्तिक दृष्टिकोण की अभिव्यक्ति,
४ अतीत की मनोवैज्ञानिक व्याख्या, एवं
५ इतिहास के प्रति न्याय-भावना।

१ अतीत के प्रति प्रेम की प्रवृत्ति और उसका पुनः संस्थापन :

ऐतिहासिक उपन्यासकार अपने वर्तमान समाज की हीन अवस्था से असंतुष्ट हो सहज ही अपने वर्तमान से श्रेष्ठ अतीत की ओर मुड़ता है। अपने वर्तमान समाज के सुधार और उत्थान के लिए वह वहाँ के आदर्श और गौरवास्पद जीवन की अपने ऐतिहासिक उपन्यासों में पुनः स्थापना करता है, वहाँ के महापुरुषों के नीति और मर्यादायुक्त जीवन के आदर्श चित्र हमारे सम्मुख प्रस्तुत करता है। वह केवल इसी दृष्टि से कि सब सामाजिक पाठक उन्हें पढ कर अपने जीवन को उन्नत और गौरवान्वित बनाएं।

२ राष्ट्रीय गौरव का उन्मेष :

संसार में राष्ट्रीय गौरव के साथ व्यक्ति का मान है। अतः नागरिकों में राष्ट्रीय-गौरव की भावना जागृत करने के लिए ऐतिहासिक उपन्यासकार अपनी कृतियों में इतिहास के उन महापुरुषों का जीवन-चरित्र प्रस्तुत करता है, जिन्होंने राष्ट्र के गौरव को उन्नत और अक्षुण्ण बनाये रखने के लिए अपना सर्वस्व न्यौछावर कर अपने राष्ट्र-प्रेम का अनन्य उदाहरण प्रस्तुत किया है। ऐसे ऐतिहासिक उपन्यासों के अध्ययन से व्यक्ति अपनी वैयक्तिक भावनाओं और राष्ट्रीय भावनाओं में सामंजस्य स्थापित कर राष्ट्रमुख हो सकता है।

३ अतीत की आधुनिक व्याख्या और उसके माध्यम द्वारा वैयक्तिक दृष्टिकोण की अभिव्यक्ति :

इस उद्देश्य के अनुसार लेखक ऐतिहासिक युग में जहाँ भी अपने वर्तमान की परिस्थितियों से साम्य देखता है, वहीं अपनी समस्याओं के चित्रण और उनके समाधान का अवकाश अपने वर्तमान युग की दृष्टि से ढूंढ निकालता है। पूर्ण साम्य के अभाव में कई बार कुछ सादृश्य के आधार पर भी वह उनके चित्रण का

आयोजन कर लेता है । फिर अपने ऐतिहासिक उपन्यास में वह उनका उन्मेष और उनकी व्याख्या इस कला के साथ करता है कि वे आश्चर्यजनक रूप से ऐतिहासिक होती हुई भी वर्तमान को लगने लगती हैं । यहीं ऐतिहासिक उपन्यासकार अपने दृष्टिकोण के अनुसार कभी प्रच्छन्न रूप से और कभी स्पष्टतया अपने सिद्धान्तों और विचारों की भी प्रभावात्मक अभिव्यक्ति कर जाता है ।

४ अतीत की मनोवैज्ञानिक व्याख्या :

अतीत की घटनाओं और पात्रों के विषय में इतिहास में जो कुछ विवरण प्राप्य होते हैं, वे उनकी मनोवैज्ञानिक पृष्ठभूमि के अभाव में मानव-मन में कितनी जिज्ञासाएं और शंकाएं उपस्थित करते हैं । जागरूक ऐतिहासिक उपन्यासकार इस दिशा में अग्रसर होते हैं, और अपने ऐतिहासिक उपन्यासों में उनकी उपयुक्त मनोवैज्ञानिक व्याख्या प्रस्तुत कर मानव-मन की जिज्ञासाओं की तुष्टि और शंकाओं का समाधान कर उन्हें संतुष्ट करने का प्रयत्न करते हैं ।

५ इतिहास के प्रति न्याय-भावना :

इतिहास के प्रति सहज प्रेम रखनेवाला साहित्यकार प्रायः इतिहास की घटनाओं और उसके पात्रों के विषय में अपने मन में एक रागात्मक वृत्ति विकसित कर लेता है । उन्हें यदि कहीं वह अन्यथा चित्रित देखता है, तो उनके प्रति उसकी न्याय भावना उसे अपने ऐतिहासिक उपन्यासों में अपने मान्य तथ्यों की अभिव्यक्ति के द्वारा अनुपयुक्त और अनैतिहासिक तथ्यों का निराकरण करने के लिए बाध्य कर देती है ।

ऐतिहासिक उपन्यासों में काल्पनिक तथ्यों के योग की सीमा :

इतिहास से कथावस्तु ग्रहण करने के ~~बाद~~ पश्चात् ऐतिहासिक

उपन्यासकार उसे अपनी कल्पना शक्ति के सहारे उपन्यास के कथानक के रूप में सुसज्जित करता है। कहीं उसे नये पात्रों की सृष्टि करनी पडती है, तो कहीं नये घटना-व्यापार की। इस प्रकार ऐतिहासिक वातावरण के निर्माण में तथा ऐतिहासिक तथ्यों को सजीव स्वरूप प्रदान करने में ऐतिहासिक तथ्यों के साथ उसे कल्पना का अवलंब भी लेना पडता है। यहां यह प्रश्न उठता है कि ऐतिहासिक उपन्यास में काल्पनिक तथ्यों का योग किस सीमा तक लिया जाय? इसके सम्बन्ध में विद्वानों में मतभेद है। कतिपय साहित्यकार ऐतिहासिक उपन्यासों में इतिहास पक्ष की ओर विशेष ध्यान न देकर ऐतिहासिक पृष्ठभूमि में उन्मुक्त कल्पना सृष्टि को ही ऐतिहासिक उपन्यास मानते हैं। श्री किशोरीलाल गोस्वामी और चतुरसेन शास्त्री प्रभृति इसी वर्ग में आते हैं। श्री गोस्वामी जी ने ऐतिहासिक उपन्यास सम्बन्धी अपना मत " तारा " की भूमिका में स्पष्ट किया है।

> " हमने अपने बनाये उपन्यासों में ऐतिहासिक घटना को गौण और अपनी कल्पना को मुख्य रखा है और कहीं कहीं तो कल्पना के आगे इतिहास को दूर से ही नमस्कार भी कर दिया है। इसलिए हमारे उपन्यास के प्रेमी पाठक हमारे अभिप्राय को भली भांति समझ लें कि यह उपन्यास है, इतिहास नहीं। यहां कल्पना का राज्य है, यथेष्ट लिखित इतिहास का नहीं। "[1]

यहां ऐतिहासिकता की उपेक्षा कर औपन्यासिकता को प्रधानता दी गई है, जबकि ऐतिहासिक उपन्यासों में ऐतिहासिकता का सम्यक् निर्वाह अनिवार्य तत्त्व है एवं वही उनकी कोटि का परिचायक है।

---

1 किशोरीलाल गोस्वामी, " तारा " - परिचयात्मक भूमिका।

श्री चतुरसेन शास्त्री ने भी " वैशाली की नगरवधू " उपन्यास की भूमिका में इस सम्बन्धी अपना मत निम्नांकित रूप में व्यक्त किया है :-

" पाठकों को यह आशा नहीं करनी चाहिए कि उपन्यास, काव्य या कहानी पढकर वे ऐतिहासिक ज्ञान अर्जन करेंगे । ऐसी पुस्तकों में तो उन्हें इतिहास के स्थान पर ऐतिहासिक रस की ही प्राप्ति होगी । "

उक्त विचारों की पुष्टि में वे आगे कहते हैं :-

" यह कहा जा सकता है कि उसे (लेखक को) ऐतिहासिक उपन्यास और कथानक लिखने से पहले ऐतिहासिक विशेष सत्यों को जानना चाहिए । परंतु यदि वह ऐसा करे, तो कदापि कोई रचना जीवन में नहीं कर सकता क्योंकि ऐतिहासिक विशेष सत्यों का ज्ञान कभी भी पूरा नहीं हो सकता । उनमें गवेषणा करनेवाले विद्वानों के द्वारा नई-नई जानकारी होते रहने से निरंतर परिवर्तन होते रहते हैं । फिर क्यों न साहित्यकार अपनी कहानी और उपन्यास की चिर सत्य के आधार पर जिसमें गवेषणा की गुंजाइश न हो, रचना करे । " [1]

इस प्रकार शास्त्री जी एवं इस पक्ष के अन्य समर्थक विद्वान् लेखक अपने ऐतिहासिक उपन्यासों में अनुकूल ऐतिहासिक पृष्ठभूमि खोज अपने विचार और सिद्धांत-प्रचार को ही प्राथमिकता देते हैं, इतिहास वहां पूर्णतया उपेक्षित-सा रह जाता है ।

दूसरे पक्ष के विद्वानों में निम्नांकित विवेचकों के विचार

---

1 श्री चतुरसेन शास्त्री, वैशाली की नगर वधू, भूमिका ।

मननीय हैं ।

आचार्य रामचंद्र शुक्ल :

आपका मत यह है कि, " जब तक भारतीय इतिहास के भिन्न भिन्न कालों की सामाजिक स्थिति और संस्कृति का अलग अलग विशेष रूप से अध्ययन करने वाले और उस सामाजिक स्थिति के सूक्ष्म ब्योरों की अपनी ऐतिहासिक कल्पना द्वारा उद्भावना करनेवाले लेखक तैयार नहीं, तब तक ऐतिहासिक उपन्यास में हाथ लगाना ठीक नहीं है । " [१]

यहां आचार्य शुक्ल ऐतिहासिक उपन्यासों में कल्पना के योग के साथ ऐतिहासिक तथ्यों की सुरक्षा तथा इतिहास के सूक्ष्म और विस्तृत ज्ञान के लिए विशेष रूप से आग्रहशील हैं ।

डा० अमरनाथ झा :

श्री वर्मा जी के " हंस मयूर " की भूमिका में डा० अमर नाथ झा ने लिखा है,

" ऐतिहासिक उपन्यास या नाटक लिखने में कई कठिनाइयां हैं, जो सम्पूर्णतया काल्पनिक कथा के लिखने में नहीं होती । इतिहास की बातों को बदलने का अधिकार लेखक को नहीं है । इतिहास के समय को ही उसे वर्णन करना होता है । उस काल के समाज और सार्वजनिक दशा से उसकी कल्पना शक्ति नियंत्रित हो जाती है, उस समय के, वेश और रहन-सहन का उसे ज्ञान प्राप्त करना होगा । "

१ आचार्य रामचंद्र शुक्ल, हिन्दी साहित्य का इतिहास, पृ० ४७४

डा० अमरनाथ झा भी आ० शुक्ल की भाँति ऐतिहासिक उपन्यास में ऐतिहासिक तथ्यों के सम्यक् निर्वाह के समर्थक है किन्तु साथ ही कल्पना के नियोजन को वे ऐतिहासिक सत्य द्वारा नियंत्रित होना अनिवार्य समझते हैं।

राहुल सांकृत्यायन :

यह हम संक्षेप में निर्दिष्ट कर चुके हैं कि राहुल जी इतिहास विरुद्ध कल्पना तथा कल्पनाधिक्य को ऐतिहासिक उपन्यासों की रचना में विकृत तत्त्व मानते हैं। इसके विषय में उनका निम्नलिखित कथन ज्यों का त्यों उद्धृत कर देना आवश्यक है।

ऐतिहासिक उपन्यास में हमें ऐसे समाज का चित्रण करना पड़ता है, जो सदा के लिये विलुप्त हो चुका है। किंतु उसने पद चिह्न जरूर छोड़े हैं, जो उनके साथ मनमानी करने की इजाजत नहीं दे सकते। इन पद-चिह्नों या ऐतिहासिक अवशेषों के पूरी तौर से अध्ययन को यदि अपने दुष्कर समझते हैं, तो कौन कहता है, आप जरूर ही इस पथ पर कदम रखें। हम देखते हैं, कम से कम हमारे देश में समर्थ कथाकार भी ऐसी गलती कर बैठते हैं और बिना तैयारी के कलम उठा लेते हैं। इसमें शक नहीं, यदि उनकी लेखनी चमत्कारिक है, तो साधारण पाठक उसे बड़ी दिलचस्पी से पढ़ेंगे और हमारे समालोचकों में बहुत कम ही ऐसे हैं, जो ऐतिहासिक यथार्थवाद की परख रखते हैं। इसलिए इतिहास के जानकारों और प्रेमियों के सिर में दर्द पैदा करनेवाले उपन्यासों पर खूब अच्छी समालोचना या सम्मति भी प्राप्त हो सकती है, लेकिन ऐसे लेखक की कृति पर राय देने का अधिकार आज हीं के पाठक नहीं रखते, समान धर्मा लोगों की भी अनेक पीढ़ियां उन्हें देखेंगी और ऐसे लेखक को सुक्ष्म दृष्टि से देखेंगी।" [1]

---

1 श्री राहुल सांकृत्यायन : आलोचना – उपन्यास विशेषांक, अक्टूबर, १९५४ लेख, " ऐतिहासिक उपन्यास " – पृ० १७२

JANSA MEHTA LIBRARY

अतः यह स्पष्ट है कि ऐतिहासिक उपन्यास में इतिहास के शुष्क और नीरस तथ्यों का सरस एवं मनोहर चित्रण करने के लिए तथा इतिहास के पात्रों को सप्राण मांसल और सजीव स्वरूप देने के लिए लेखक अपनी कल्पना का और कतिपय किंवदंतियों और जनश्रुतियों का प्रयोग कर सकता है। किंतु उसका यह प्रयोग ऐतिहासिक संभाव्यता की परिधि तक ही सीमित रहना चाहिए। साथ ही ऐतिहासिक वातावरण का चित्रण करते समय लेखक केवल अपनी कल्पना के बल पर ही अग्रसर नहीं होगा वरन् उसे इस कार्य में तत्कालीन इतिहासज्ञों और पुरातत्त्व-वेत्ताओं और भूगोल-शास्त्रियों के ज्ञान का भी सम्यक् उपयोग करना चाहिए। राहुल जी भी इसके बड़े आग्रही हैं -

> " ऐतिहासिक अनौचित्य से बचने के लिये जिस तरह तत्कालीन ऐतिहासिक सामग्री और इतिहास का अच्छी तरह अध्ययन आवश्यक है, वैसे ही भौगोलिक अध्ययन की भी आवश्यकता है। " [१]

इस प्रकार हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि ऐतिहासिक उपन्यासों में काल्पनिक तथ्यों का योग उस सीमा तक ही सराहनीय और ग्राह्य है, जहां तक वह ऐतिहासिक संगति और ऐतिहासिक सम्भाव्यता की परिधि के अन्तर्गत रहता हो। बिना इस सन्तुलन के उपन्यास केवल कल्पनाओं का अनायबघर बन कर रह जायेगा तथा यह कल्पना-प्राचुर्य ऐतिहासिक उपन्यासों को पाठकों को गुमराह करने में सहयोग प्रदान करेगा। इतना ही नहीं ऐतिहासिक तथ्यों की मनमानी और कल्पनाश्रित प्रस्तुतियों से पाठकों के मन में इतिहास के वास्तविक स्वरूप के प्रति भी सन्देह उत्पन्न होने प्रारम्भ हो जायेंगे और हमारे इतिहास की गौरवमयी परम्परा की महत्ता क्षीण होगी। कल्पना की ये अनियंत्रित और असंतुलित उड़ानें इतिहास को अपने आसन से

---

१ श्री राहुल सांकृत्यायन, आलोचना : उपन्यास विशेषांक में " ऐतिहासिक उपन्यास ", पृ० १७२

नीचे खींचकर उसे विवादों के कटघरे में खडा कर देने में सफल हो सकती हैं। हमें इस विशुद्ध कल्पना के कारण उपन्यास से सम्बन्धित एक महत्त्वपूर्ण तथ्य का भविष्य भी धुंधला पडता दिखाई देता है। वह है कृति अथवा कृतिकार के द्वारा प्रदान किया जाने वाला संदेश। ऐसा लगता है कि यदि ऐतिहासिक उपन्यासकार कोरी कल्पना के आधार पर रचना करता है तो उसके द्वारा प्राप्य उद्देश्य या प्रदान किये जाने वाले संदेश की जमीन उससे अपने आप छूट जायेगी। उसका श्रम व्यर्थ होगा। यदि उसे हमारे अतीत से सम्बन्धित किसी सांस्कृतिक, सामाजिक अथवा राष्ट्रीय जीवन को विश्लेषित करके अपने सम सामयिक सामाजिक जीवन को प्रेरणा अथवा नूतन संदेश देना है, तो उसे यह कल्पनाधिक्य इससे विरत कर देगा। वह अपने उद्देश्य में तभी सफल होगा जबकि वह इतिहास और कल्पना का समुचित सन्तुलन बनाये रखेगा। अतः संक्षेप में यह कह सकते हैं कि इतिहास और कल्पना के मध्य विभाजक रेखा बनाये रखने के लिये अपने किसी विशिष्ट उद्देश्य की वास्तविक जमीन पर खडे रहने के लिये तथा अपने कृतित्व की सार्थकता के लिये एक ऐतिहासिक उपन्यासकार के लिये यह अपरिहार्य हो जाता है कि वह इतिहास और कल्पना की सापेक्षता को समझ कर आगे बढे। इन दोनों तथ्यों को परस्पर बांध कर चले।

ऐतिहासिक उपन्यासों का वर्गीकरण :

ऐतिहासिक उपन्यासों में प्रयुक्त कथावस्तु, पात्र और चरित्र-चित्रण तथा वातावरण सम्बन्धी ऐतिहासिक तथ्यों की सीमा के आधार पर हम उनका वर्गीकरण चार भागों में कर सकते हैं।

(१) विशुद्ध ऐतिहासिक उपन्यास, (२) समन्वयान्वित ऐतिहासिक उपन्यास, (३) वातावरण प्रधान ऐतिहासिक उपन्यास, (४) कल्पना प्रधान ऐतिहासिक उपन्यास।

१ विशुद्ध ऐतिहासिक उपन्यास :

जहां उपन्यास का कथानक इतिहास से प्रमाणित हो, उसके पात्र

और उनके क्रिया-कलाप ऐतिहासिक भूमि पर आधारित हों, और उन्हें अपने विशुद्ध ऐतिहासिक वातावरण की पृष्ठभूमि में कलात्मकता के साथ प्रस्तुत किया गया हो, तो ऐसा उपन्यास विशुद्ध ऐतिहासिक कथानक, पात्र और चरित्र-चित्रण एवं वातावरण से युक्त होने के कारण, विशुद्ध ऐतिहासिक उपन्यास की कोटि में रखा जा सकता है। श्री वृंदावनलाल वर्मा का " झाँसी की रानी : लक्ष्मीबाई " इस कोटि का उदाहरण हो सकता है।

२ समन्वयान्वित ऐतिहासिक उपन्यास :

जिन उपन्यासों में मुख्य पात्र और आधाकारिक कथानक तो ऐतिहासिक हों, किंतु साथ ही ऐतिहासिक सम्भाव्यता के आधार पर गौण पात्र और प्रासंगिक कथानक का भी कथानक के विकास, पात्रों के चरित्र-चित्रण और वातावरण की सृष्टि के लिए आयोजन किया गया हो, वे उपन्यास ऐतिहासिक तथ्य और सम्भाव्यता के समन्वय के आधार पर समन्वयान्वित ऐतिहासिक उपन्यास कहे जा सकते हैं। उदाहरणार्थ श्री वर्माजी का " मृगनयनी " उपन्यास।

३ वातावरण प्रधान ऐतिहासिक उपन्यास :

कतिपय ऐतिहासिक उपन्यासों में कथा का पर्याप्त भाग और उसके मुख्य पात्र कल्पना-प्रसूत होते हैं। इनमें उपन्यासकार अपने कथानक का सम्बन्ध समसामयिक ख्यात पात्रों से जोड देता है, जो कथानक में गौण रूप में होते हैं, किंतु उनका वातावरण पूर्णतया ऐतिहासिक होता है। इन उपन्यासों में कथानक और पात्रों की अपेक्षा वातावरण ही अपने विशुद्ध रूप में विद्यमान रहता है। अतः इसी (वातावरण) के आधार पर ऐसे उपन्यासों को वातावरण प्रधान ऐतिहासिक उपन्यास कहा जा सकता है। श्री वर्माजी का " विराटा की पद्मिनी " उपन्यास इस कोटि का सुंदर उदाहरण हो सकता है।

४. कल्पना-प्रधान ऐतिहासिक उपन्यास :

जहाँ उपन्यास का कथानक, उसके पात्र, और उनका चित्रण आदि सभी काल्पनिक हों और ऐतिहासिक वातावरण का भी आभास मात्र हो, ऐसे उपन्यास ऐतिहासिक कल्पना की प्रधानता के कारण कल्पना-प्रधान ऐतिहासिक उपन्यास कहे जा सकते हैं। इन उपन्यासों में लेखक ऐतिहासिक कल्पना के सहारे ऐतिहासिक वातावरण का आभास प्रस्तुत करते हुए एक रोमांसपूर्ण कथानक का सृजन करता है।

डा० शिवनारायण श्रीवास्तव तथा डा० शशिभूषण सिंहल ने ऐतिहासिक वातावरण, वस्तु, और पात्र वाले उपन्यासों को शुद्ध ऐतिहासिक और केवल ऐतिहासिक वातावरण वाले उपन्यासों को प्रेमाख्यानक ऐतिहासिक उपन्यास माना है[१]। यह वर्गीकरण अवैज्ञानिक और अनुपयुक्त प्रतीत होता है। जैसा कि 'प्रेमाख्यानक' शब्द से प्रकट है कि प्रेम-विषयक उपन्यास दोनों कोटि के उपन्यासों में हो सकते हैं और प्रेम के आख्यान का नितान्त अभाव भी हो सकता है। यह कहा जा सकता है कि विद्वान लेखक ऐतिहासिक उपन्यासों में प्रेम के कथानक को अनिवार्य मानते हैं तथा दूसरे वे ऐतिहासिक वातावरण, पात्र, और कथावस्तु की विशेषता आ जाने पर उपन्यास को प्रेमाख्यान विहीन स्वीकार करते हैं, जिसका उन्होंने कोई कारण दृष्टिगत नहीं कराया है। वस्तुत: कल्पना विनियोजन द्वारा उपन्यास की ऐतिहासिकता और रचना-विधान में जो परिवर्तन आता है, उसी को ऐतिहासिक उपन्यास के विविध रूपों का निर्णायक स्वीकार करना चाहिए। साथ ही यह स्मरणीय है कि प्रेम की कोई न कोई कथा या घटना प्राय: सभी वर्गों के उपन्यासों में मिलती है, जो कि परवर्ती अध्यायों के विवेचन से प्रकट है।

---

१ (i) डॉ० शिवनारायण श्रीवास्तव हिन्दी उपन्यास पृ० ४६८

(ii) डॉ० शशिभूषण सिंहल - उपन्यासकार वृन्दावनलाल वर्मा (सं० १९६०) पृष्ठ. ३५